श्रीवीतरागाय नमः।

शाहजहानाबाद निवासी

स्वर्गीय श्रीयुक्त पं० हीरानन्दजी कृत

पंचास्तिकाय-समयसार।

सम्पादक–

उदयलाल काशलीवाल.

प्रकाशक–

हिन्दी-जैनसाहित्यप्रसारक कार्यालय

चंदावाडी गिरगाँव बम्बई.

प्रथम संस्करण { वीरनिर्वाण २४४२ फाल्गुन } कीमत, सादी जिल्द १) रु० कपड़ेकी पक्की जिल्द १।) रु०

कारंजा-मठाधीश श्रीमद्भट्टारक वीरसेन स्वामी।

आध्यात्मिक विषयके विद्वान्, कारंजा-मठाधीश
श्रीमद्भट्टारक वीरसेनस्वामीजी महाराजके
चरणारविन्द-मधुकर
अध्यात्मप्रेमी
धरणगाँव (खानदेश) निवासी
श्रीयुत सेठ चुंनीलालजी अम्बुसाहजींने
ओसवाल-कुलभूषण
अपने स्वर्गीय पिता—हीरासा सावजी,
और
माता—श्रीमती कोंडीबाईके
चिरस्मरणार्थ
तथा
ज्ञानावरणी-कर्म-क्षयार्थ
अध्यात्म-रस-परिप्लुत, परम पुनीत
पंचास्तिकाय-समयसारकी
१००० प्रतियाँ जैनमित्रके ग्राहकोंको
विना मूल्य वितीर्ण कीं।

निवेदन।

पं० हीरानंदजीकी कविता कैसी है और इस 'पंचास्तिकाय' जैसे कठिन ग्रंथका छन्दोबद्ध अनुवाद कर उन्होंने कितनी सफलता प्राप्त की है, इस विषयका कविता-प्रेमी तथा अध्यात्म-प्रेमी पाठक ही निर्णय कर सकेंगे। इसलिए इस विषयमें कुछ न कहकर इसका भार विचारशील पाठकों पर ही छोड़ा जाता है।

पंचास्तिकाय-समयसारकी हमें एक ही प्रति प्राप्त हुई; और वह भी प्रायः अशुद्ध। उसमें अनेक जगह पाठ भी छूटा हुआ था। इन कारणोंसे पुस्तकके छपानेमें हमें बड़ी कठिनाईका सामना करना पड़ा। छूटे हुए पाठोंको हमने भी छोड़ दिया है। जिनके पास इसकी हाथकी लिखी प्रति हो वे यदि छूटे हुए पाठोंको लिखकर जैनमित्रमें छपवादें तो बहुत अच्छा हो।

पुरानी भाषाके संशोधनका हमारे लिए यह पहला मौका है, इसलिए गल्तियाँ रह जाना असंभव नहीं। पाठक ऐसी गल्तियोंको सुधारकर पढ़ें।

संशोधक.

विषय-सूची।

विषय. पृष्ठ.

१ मंगलाचरण ४

पंचास्तिकायषट्-द्रव्याधिकार।

२ द्रव्यागमरूप शब्दसमयको नमस्कार कर अर्थसमयको ... कहनेकी प्रतिज्ञा ५

३ समयशब्दका अर्थ और अर्थसमयके लोकालोकरूप भेद ७

४ पाँच द्रव्योंमें अस्तिकायपनेकी सिद्धि ८

५ पाँच द्रव्योंमें अस्तित्व और कायत्वका निरूपण ९

६ पाँच अस्तिकाय और काल इन छहोंकी द्रव्यसंज्ञा है ११

७ छहों द्रव्य एक जगह रहने पर भी स्वरूपसे जुदे जुदे हैं ... १२

८ अस्तित्व-सत्ताका स्वरूप १३

९ द्रव्यसे सत्ताका अभिन्नपना १५

१० द्रव्यका लक्षण १६

११ दो नयोंकी अपेक्षासे द्रव्य-लक्षणका भेद १६

१२ द्रव्य और पर्यायकी अभिन्नता १८

१३ द्रव्य और गुणकी अभिन्नता १९

१४ सप्तभंगी द्वारा द्रव्यका निरूपण १९

१५ 'सत्' का नाश और 'असत्' की उत्पत्ति नहीं होती ... २१

१६ द्रव्य-गुण-पर्यायका निरूपण २२

१७ भावका नाश और अभावकी उत्पत्ति नहीं होती, इसका उदाहरण २३

१८ पर्यायार्थिक और द्रव्यार्थिक नयसे द्रव्यके उत्पाद, विनाश और ध्रौव्यत्वका निरूपण २४

१९ द्रव्यार्थिकनयसे 'सत्' का नाश और 'असत्' की उत्पत्ति नहीं होती २५
२० पर्यायार्थिकनयसे सिद्धोंके 'असत्' का उत्पाद भी होता है २६
२१ जीवके उत्पाद-व्यय पर्यायार्थिक नयसे हैं इसलिए 'सत्' का नाश और 'असत्' का उत्पाद होता है २७
२२ सामान्यपने कहे गये छह द्रव्योंमें पाँच द्रव्य अस्तिकाय कहे जाते हैं २८
२३ काल द्रव्यका वर्णन २९
२४ पंचास्तिकायका विशेष स्वरूप ३३
२५ भट्टचार्वाकके प्रति सर्वज्ञसिद्धि ३४
२६ चार्वाकके प्रति जीवसिद्धि ३७
२७ जीवका स्वदेह-परिमाण ३८
२८ जीवका अमूर्त्तपना ४१
२९ चार्वाकके प्रति चेतन्यसमर्थन ४४
३० उपयोगका स्वरूप ४६
३१ ज्ञानोपयोगके भेद ४७
३२ मतिज्ञान आदि पाँच ज्ञानको सम्यक्पना ४७
३३ तीन अज्ञानोंका वर्णन ५२
३४ दर्शनोपयोगका निरूपण ५३
३५ जीव और ज्ञानका भेद ५४
३६ द्रव्यगुणमें व्यपदेशादिकका कथन ५६
३७ द्रव्य और गुणमें भेदका निषेध ५९
३८ कथञ्चित् अभेदमें दृष्टान्त ६२
३९ जीवका विशेष वर्णन ६३
४० जीवके औदयिकादि भावोंका वर्णन ६५

४१ जीवका कर्त्तापना ६६
४२ जीवके कर्त्तापनमें पूर्वपक्ष ७२
४३ जीवके कर्तृत्वमें किये गये पूर्वपक्षका उत्तर ७३
४४ जीवास्तिकायका भेद वर्णन ७९
४५ पुद्गलस्कन्धका वर्णन ८०
४६ परमाणुका स्वरूप ८४
४७ परमाणुमें पृथ्वी आदि जातिभेदका निषेध ८४
४८ शब्द पुद्गलकी पर्याय है ८५
४९ एक परमाणुमें रसादिककी संख्या ८८
५० पुद्गलास्तिकायके वर्णनका उपसंहार ८९
५१ धर्मास्तिकायका स्वरूप ९०
५२ अधर्मास्तिकायका स्वरूप ९२
५३ धर्म और अधर्म द्रव्यके न माननेसे हानि ९४
५४ आकाशास्तिकायका स्वरूप ९७
५५ आकाश धर्माधर्मकी तरह गति-स्थितिका हेतु नहीं हो सकता। ऐसा माननेसे हानि है ९९
५६ धर्माधर्म और आकाश इन तीन द्रव्योंमें एकपने तथा पृथक्पनेका निरूपण १०२
५७ छह द्रव्योंकी कुछ खास खास बातोंका वर्णन १०४

नव-पदार्थाधिकार।

५८ व्यवहार मोक्षमार्गका स्वरूप ११२
५९ पदार्थोंके नाम ११४
६० जीव-स्वरूपका उपदेश ११५
६१ जीवोंके भेद ११६
६२ आकाशादिक पाँच द्रव्योंमें अजीवपना १२९

६३ जीवका कर्मके निमित्तसे परिभ्रमण १३२
६४ पुण्यपापका स्वरूप १३३
६५ पुण्यास्रवका स्वरूप १३७
६६ पापास्रवका स्वरूप १४१
६७ संवरका स्वरूप १४२
६८ निर्जराका स्वरूप १४५
६९ निर्जराके कारण ध्यानका स्वरूप १४७
७० बन्धका स्वरूप १४८
७१ मोक्षमार्गका वर्णन १५१

मोक्षमार्गका विस्तारसे वर्णन।

७२ मोक्षमार्गका स्वरूप १५५
७३ स्वसमय और परसमयका वर्णन १५६
७४ परसमयका स्वरूप १५७
७५ स्वसमयका विशेष वर्णन १५९
७६ व्यवहार-मोक्षमार्गका वर्णन १६१
७७ निश्चय-मोक्षमार्गका वर्णन १६२
७८ भावसम्यग्दृष्टिका वर्णन १६३
७९ मोक्ष और पुण्यबंधके कारण १६४
८० सूक्ष्म-परसमयका कारण १६५
८१ पुण्यास्रवसे कालान्तरमें मोक्षलाभ १७०
८२ वीतरागता लाभकरना ही इस शास्त्रका उद्देश है १७२
८३ शास्त्रसमाप्ति और ग्रन्थनिर्माणका कारण १७९

ॐ नमः सिद्धेभ्यः ।

श्रीकुंदकुंदाचार्यविरचित

पंचास्तिकाय-समयसार ।

छप्पय छंद ।

स्वपरविकासक विमलग्यान, दरसनगुनरासी ।
सकल पदारथ जथा, तथा मरजाद विकासी ॥
अचल अगन-परदेस, अयुत सरवंग निरागी ।
परम समरसी-भाव अनाकुल-सुख वड़भागी ॥
इति सहज सुद्ध-गुन—भावयुत, अस्तिकाय आतम दरव ।
अनुभव-विलास कारन करन, जयजय जगमाहिं निज परव ॥ १ ॥

दोहा ।

आतम-दरव भला परव, जगमगात जगधाम ।
जिन यहु आपविषै लख्या, तिनकौं सदा प्रनाम ॥ २ ॥

चौपई ।

आतम-दरव परव जिन कीन्हा, तिन मुनिराज परमपद चीन्हा ।
जिन यहु परवक-रवि नहिं जाना, तिन आतम सब जग भटकाना

दोहा ।

पंचमकाल विषै किया, जिन यहु परव प्रमान ।
कुंदकुंद मुनिराजसौं, ताकौ सुनहु वखान ॥ ४ ॥

सवैया इकतीसा (मनहरन छन्द)

स्यादवाद आगम सुभाव-भाव-रसवेदी,
श्रीकुमारनंदि देव मुनिराज भयौ है ।
ताकौ सिष्य जान जती लोकमैं प्रसिद्ध मुनि,
कुंदकुंद आचारिज जिन पास गयौ है ॥
तहाँ जिनवानी जानी स्वपरविवेक-सानी,
भानी भव-भाव-थिति आप माहिं भयौ है ।
तिनही पंचास्तिकाय नाम धरि ग्रंथ कीया,
आप-पर-पर्वकौ लखाव तामैं ठयौ है ॥ ५ ॥

अडिल्ल छन्द ।

पद्मनंदि पुनि एलाचारिज जानिए ।
कुंदकुंद मुनिराज जगत परवानिए ॥
वक्रग्रीव अरु गिद्धपिच्छ मुनि नाम ए ।
जानौ ताकौ कथन परम सुखधाम ए ॥ ६ ॥

सवैया तेईसा (मत्तगयंद)

जात-सरूप अनूप निरंतर, संवर रूप दिगम्बर जाचा ।
वानि विषै जिनवानि जथावत, जैसैं कछु श्रुति केवल वाचा ॥
मानस माहिं विचार परापर, आप स्वकीय स्वभावमैं राचा ।
पंचमकाल दयाल कृपानिधि, कुंदकुंदा मुनि आरज साचा ७

कोक-विभाव अभाव किए जिन, चेतनरूप सदा इक जान्या।
जाति विजाति दोऊ इक ठौर, विरोध-विनासक सासन मान्या॥
स्याद सुवाद जथावत जानि, किया समभाव सुभाव प्रमान्या॥
सो कुँदकुंद अचारजरूप, अनूपम पंचमकाल बखान्या॥ ८ ॥

दोहा ।

कुंदकुंद मुनिराजने, करी प्रगट जिनवानि ।
गाथारचित सुहावनी, सकल अरथकी खानि ॥ ९॥
सार नाम बहुते किए, गाथा ग्रंथ बखान ।
समयसार नाटक त्रयी, सबमैं भई प्रधान॥ १० ॥
पंचासतिकाया प्रगट, तिनमहिं प्रकरन एक ।
ताकी कछु भाषा कहूँ, निजभाषा–अभिषेक॥ ११ ॥

सोरठा ।

निजभाषाअभिषेक, अमृतचंद जैसा कह्या ।
तैसैं सकल विवेक, लोकभाषमैं कहत हौं॥ १२ ॥

दोहा ।

इक्कासी अरु सौ अधिक, यहु सब गाथा मान ।
श्रुतसकंध है तीन तिहिं, गहरा बहुत बखान ॥ १३ ॥
प्रथम अस्तिकाया कथन, छहौं दरब अधिकार ।
दुतिय पदारथ तत्वविधि, तृतिय मोखविस्तार ॥ १४ ॥
समय नाम अधिकार है, जिनवानीमैं सार ।
ताकौ सकल बखान यहु, ग्यानबढ़ावनहार ॥ १५॥

कुंदकुंद मुनिराज अब, करैं ग्रन्थ प्रारंभ ।
परमातम पदकौं नमत, ज्यौं आतम–उपलंभ ॥ १६ ॥

अथ ग्रन्थारंभे सूत्रावतारः—, गाथा ।

इंदसदवंदियाणं तिहुवणहिदमधुरविसदवक्काणं ।
अंतातीदगुणाणं णमो जिणाणं जिदभवाणं ॥ १ ॥

दोहा ।

इंद सतनिकरि वंदि पद, हित-मित-निर्मल बोल ।
गुन अनंत जिनराज पद, नमौं विगत-भवडोल ॥ १७ ॥

सवैया इकतीसा ।

जाकौं इंद वंदैं तिहुँ लोकके त्रिकाल विषै,
ताहीतैं त्रिलोकपति नाम गाईयतु है ।
जीवहितकारी मनोहारी सुधा दिव्यवानी,
याहि मानि पुरुष पुरान ध्याईयतु है ॥
भवकौ भ्रमन हरौ करता था सोई करौ,
ग्यानकौ अपार जामैं सदा पाईयतु है ।
सुद्धि साधि साधिवेकौ भाव बढ़ै जानिकरि,
ताकौं जिन ईस जानि सीस नाईयतु है ॥ १८ ॥

दोहा ।

वंदनीक पद जगतमैं, करै सार उपदेस ।
गुनी सकल गुनना करैं, सो जिन विगत-कलेस ॥ १९ ॥
ग्यानादिक गुन अनुभवन, भाव नमनता जोइ ।
सो विसुद्ध निहचै कथन, दूजौ रहै न कोय ॥ २० ॥

'नमो जिनानं' यहु वचन, दरव नमन करि जान।
असदभूत विवहार है, जानै परम सुजान॥ २१॥
साधन साधि जुदानकौं, मानै एक बनाय।
सो निहचै नय सुद्ध है, सुनत करम कट जायँ॥ २२॥

सोरठा।

सुनत करम कट जायँ, जथारूपकौ अनुभवन।
ज्यौं सुख हिय अधिकाय, मित्र-पत्रिका पठनतैं॥ २३॥
साधक ताकौ नाम, साधिरूप जातैं सधै।
जिन मनमैं जिनकाम, यहु संबंध प्रवान है॥ २४॥

दोहा।

जो पूरन पदकौं नमै, सो परिपूरन होइ।
संगति सरसा फल लगै, कहत सयाने लोइ॥ २५॥

सोरठा।

सो परिपूरन होइ, जो पूरन पदकौं नमै।
परिपूरन पद सोइ, जगत अधूरन भाव जहँ॥ २६॥

दोहा।

कुंदकुंद मुनिराज अब, जिनपद हित उपजाय।
समय नामकौं नमत हैं, सुनहु भविक मन लाय॥ २७॥

अथ समयो हि आगमस्तस्य प्रणामपूर्वकमात्मनाभिधानमाह—

गाथा।

समणमुहुग्गदमट्ठं चदुग्गदिणिवारणं सणिव्वाणं।
एसो पणमिय सिरसा समयमियं सुणह वोच्छामि॥ २॥

दोहा ।

वीतराग मुख-जनित है, अरथरूप गतिनास ।
मोख-होति मुनि नमन करि, करत समय परकास ॥ २८ ॥

सवैया इकतीसा ।

वीतराग सर्वग्यानी उदै पाय खिरै वानी,
कालजोग पाय जीव सब्दरूप गहै है ।
पंच अस्तिकाय अर्थ अभिधेय आप पर,
जथातथ्य जानि जानि सिवरूप लहै है ॥
वीतराग पावै चारौं गतिमैं न आवै सोई,
निरवान पद परवान सदा रहै है ।
तातैं भेदग्यानी जिनवानीकौं त्रिकाल नमैं,
समय नाम व्याख्याको साखीभूत कहै है ॥ २९ ॥

सवैया तेईसा ।

राग विरोध कुदेव-प्रतीति विनास सदा सब लोक भवानी ।
अर्थ अनेक विधेय है एक, चहूँ गति वारण मोखनिसानी ॥
आतमरूप अनूपकी प्रापति, कारणरूप जिनेस वखानी ।
यातैं नमै औ वखान करैं मुनि, सो समयातम श्रीजिनवानी॥३०॥

दोहा ।

दरसन मोह उदै घटै, अपने सनमुख आप ।
देखै जानै अनुचरै, जिनवानी परताप ॥ ३१ ॥

सोरठा ।

समय नाम अधिकार, सब जिनवानीमैं प्रगट ।
स्वपर-विवेक विहार, कालजोगतैं पाइए ॥ ३२ ॥

अथ त्रिधासमय-अडिल्ल ।

वचनवर्गणा सवदमयी आगम कह्या ।
अस्तिकायजुत अर्थ समय अभिधा लह्या ॥
जो अनुभवन सरूप भावश्रुत सार है ।
सो ग्यानागम समय तीन परकार है ॥ ३३ ॥

दोहा ।

सबद-समय संबंध है, अरथ-समय अभिधेय ।
ज्ञान-समय फलका लखन, सदा काल आदेय ॥ ३४॥

अथार्थसमयविवरणं—गाथा ।

समवाओ पंचह्नं समओत्ति जिणुत्तमेहिं पण्णत्तं ।
सो चेव हवदि लोओ तत्तो अमिओ अलोओ खं ॥ ३ ॥

दोहा ।

पंच वस्तु समवायकौं, समय कहत जिनराज ।
लोक सो जु तातैं परे, अमित अलोक समाज ॥ ३५ ॥

सवैया इकतीसा ।

सबकौ समूह इकठौर सोई समवाय,
ताहीकौं समय नाम ग्रंथनिमैं चलै है ।
जहाँ पंच वस्तुकौ मिलाप एक खेत देखै,
आप आप विपै पै न कोऊ कास्यौं रलै है ॥
सोई लोकाकास जामैं लोकिए सदैव द्रव्य,
तातैं परै सुन्नाकास लोकभाव टलै है ।
ऐसा सरधान जिनवानीके प्रवान आवै
जबै जीव माहिं मिथ्या मोह-भाव गलै है ॥ ३६ ॥

दोहा ।

आदि आदि नहिं देखिए, अन्त अन्त नहिं जास ।
वसै जहाँ षट दरव ए, सोई लोकाकास ॥ ३७ ॥
तातैं परै अनंत है, सबै अलोकाकास ।
समय नाम तातैं कह्या, लोकालोक-निवास ॥ ३८ ॥

अथ पंचास्तिकायानां विशेषसंज्ञास्तित्वे कायत्वं च प्रतिपादयति—

गाथा ।

जीवा पुग्गलकाया धम्माधम्मा तहेव आयासं ।
अत्थित्तह्मिय णियदा अणण्णमइया अणुमहंता ॥ ४ ॥

दोहा ।

जीव काय पुग्गल धरम, अधरम नाम अकास ।
अस्तिभावयुत आपगत, अनु महंत सुविलास ॥ ३९ ॥

सवैया इकतीसा ।

जीव और पुग्गल धरम औ अधर्म व्योम,
वस्तु नाम पंच अस्तिकायके विसेख हैं ।
ध्रौव्य नास उतपाद सत्तारूप अस्ति एक
तिहूँकाल पै तथापि न्यारी न्यारी रेख है ॥
एक परमानुमैं अनेक सक्ति काय जोग,
चारोंमैं प्रदेसपुंज काय पै अलेख है ।
एई लोक लोकनिके ग्यानी लोक लोक कहैं,
तीनौं तौ न लोकै जौलौं नैन मिथ्या मेख है ॥ ४० ॥

दोहा ।

काल अनू अस्तित्वकौं, लिये जदपि तिरकाल ।
काय नाम लाभै नहीं, अनमिल ताकी चाल ॥ ४१ ॥

दरव कथनमैं कालकौं, कियौ कथन निरवाहि ।
अस्तिकायके कथनमैं, मुनिजन गनत न ताहि ॥ ४२ ॥

अथ पंचास्तिकायानामस्तित्वसंभवप्रकारः कायत्वसंभवप्रकारश्च—

गाथा ।

जेसिं अत्थिसहाओ गुणेहिं सह पज्जएहिं विविहेहिं ।
ते होंति अत्थिकाया णिप्पण्णं जेहिं तइलोक्कं ॥ ५ ॥

दोहा ।

नाना गुन परजाय करि, जिनके अस्ति सुभाव ।
अस्तिकाय ते जगतमैं, तिनहीं करि जगभाव ॥ ४३ ॥

सवैया इकतीसा ।

सहभावी गुन और क्रमभावी परजाय,
नाना भेद-भावकरि अस्ति जहाँ पावै है ।
एकता प्रदेसहूँकी पाँचौंमैं सुभाव सोई,
काय ताके कथनेकौं भेदनिकै आवै है ॥
एई पाँचौं अस्तिकाय जिनरायवानी विषै,
इनहींसौं लोकाथिति सदाकाल भावै है ।
नाहीं किए करै कौन आदि अंत औ न पावै,
ग्यानी सरधान भयै नीकै जस गावै है ॥ ४४ ॥

दोहा ।

गुन परजै करि विविध है, अस्तिकायकौ रूप ।
गुन परजै सो दरव है, तातैं वस्तु अनूप ॥ ४५ ॥

अस्तित्व संभवप्रकार—

सवैया तेईसा ।

देवसरूप धरौ नर छाँड़िकै, चेतन एक दोऊ संग ठानै ।
जाकौ विनास उदोत है ताहीकौ, सोई सदा थिर लोक भवानै॥
आनकै मानत आन उदै, विनसै पुनि आन रहै कोऊ आनै ।
तातैं है एकही वस्तुमैं अस्ति, सोई त्रिक रूप जिनेस बखानै४६

दोहा ।

कुंडलरूप विनासिकै, मुद्रारूप समार ।
सोना दुहुमैं एक है, जानै सब संसार ॥ ४७ ॥

कायत्व संभवप्रकार—

सवैया तेईसा ।

जैसैकै एक विभाग (?) अकास अनेक विभाग दोऊविधि पावै ।
तैसैकै जीवरु धर्म अधर्म, विषै परदेस-विभाग रहावै ॥
पुग्गलमाहिं मिलापकरूप, प्रसिद्ध त्रिलोक विषै मिलि धावै ।
कालविषै न मिला इक सोहत, याहीतैं पंचमैं काय कहावै ॥४८॥

दोहा ।

तीन लोककै भाव सब, उपजि विनसि थिररूप ।
अस्तिकायकै साधतैं, सधैं सकल अनरूप ॥ ४९ ॥
सुद्ध चेतना गुन जहाँ, सुद्ध सिद्धपरजाय ।
उपादेय जगमैं सदा, जीव अस्तियुत काय ॥ ५९ ॥
नाममात्र करि एक है, अस्तिकायकै भेद ।
काल कथन कारन लियै, करत दरव विच्छेद ॥ ५१ ॥

अथ पंचास्तिकायानां कालस्य च द्रव्यत्वमुच्यते--

ते चेव अत्थिकाया ते कालियभावपरिणदा णिच्चा।
गच्छंति दवियभावं परियट्टणलिंगसंजुत्ता ॥ ६ ॥

दोहा।

अस्तिकायकै भेद सब, तीन काल गतभाव।
नित्यवर्तना लिंगयुत, पावै द्रव्य कहाव ॥ ५२ ॥

सवैया इकतीसा।

एई पाँचौं अस्तिकाय उपजै विलाय जाहिं,
परजाय न्यायकरि छिनक सरूप हैं।
नित्य अविनासी निज निज गुन परगासी,
दरवरूप गायकतैं सदाकाल भूप हैं ॥
इनहींका परनाम वर्तना सरूप लसै,
सोई काल नाम ताकै मिलै छहौं रूप हैं।
एई द्रव्य नाम पावैं अपनै सुभाव धावैं
ग्यानी जीव गुन गावैं ग्येय ए अनूप हैं ॥ ५३ ॥

काल-व्यक्तिकरण--

सवैया तेईसा।

पुग्गल द्रव्य सदा जगमध्य, अनेक प्रकारकै रूप दिखावै।
रूपतैं रूपकौ होइ जु अंतर, सांतर सो परनाम कहावै ॥
सो परिनाम है पुग्गलको, परिवर्तनरूपमैं काल लखावै।
याहीतैं पाँचमो काल जुदा इक, वर्तनलिंग जिनेस बतावै ॥ ५४ ॥

दोहा।

जीव और पुग्गल धरम, अधरम नभ पुनि काल।

छहौं दरव ए जगतमैं, जगमगात गुनमाळ ॥ ५५ ॥
उपादेय निज जीव है, और सकल नित हेय ।
इहै कथन सब कथनमैं, अनुभौ हित आदेय ॥ ५६ ॥

अथ षण्णां द्रव्याणां परस्परमत्यन्तसंकरेपि स्वकीयस्वरूपादप्रच्यवन-मुपदिशति--

गाथा ।

अण्णोण्णं पविसंता दिंता ओगासमण्णमण्णस्स ।
मेळंता वि य णिच्चं सगं सभावं ण विजहंति ॥ ७ ॥

दोहा ।

सबहीमैं परवेस है, सबहीमैं अवकास ।
आपसमैं सब मिलि रहै, निज निज सदा विलास ॥ ५७ ॥

सवैया इकतीसा ।

सबहीकौं सबै आप आपमैं प्रवेस देहिं,
आपसमैं सबै और ठौरमैं रमतु है ।
आपसमैं एकमेक होंहिं एक खेत विषै,
एक क्रियावंत एक क्रियाकौं वमतु है ॥
संकरादि दोसकौं न भावलेस लसै इहाँ,
द्रव्य सीमलेखै सदा आपमैं गमतु है ।
एई छहौं द्रव्य स्यादवादकौं न साधि सकै,
याहीतैं अनादि जीव लोकमैं भमतु है ॥ ५८ ॥

दोहा ।

परकी संगति परहिसौं, परमिलाप पररूप ।
पै सुभाव अनुभौ दसा, जीव दरव चिद्रूप ॥ ५९ ॥

सोरठा ।

जीव दरव चिद्रूप, जदपि करमसौं मिलि रहै ।
तदपि न तजै सरूप, निहचैं नय अवलोकतैं ॥ ६० ॥

अथास्तित्वस्वरूपं निरूपयति— गाथा ।

सत्ता सव्वपयत्था सविस्सरूवा अणंतपज्जाया ।
भंगुप्पादधुवत्ता सप्पडिवक्खा हवादि एक्का ॥ ८ ॥

दोहा ।

सत्ता सतपदमैं विविध, परजै सकति अनंत ।
व्यय उतपाद ध्रुवत्तमय, एक सपच्छ हवंत ॥ ६१ ॥

अडिल्ल ।

सरव पदारथ विषै सरूप अनेक है ।
उपजै विनसै अचल महासत एक है ॥
एकरूप प्रतिपच्छ सु एक सुपच्छ है ।
परजै विविध प्रकार सु सत्ता लच्छ है ॥ ६२ ॥

सवैया इकतीसा ।

अपनै चतुष्टयसौं सबै वस्तु पुष्ट लसै,
उपजै विनासि रहै सत्ता तामैं सार है ।
जैसैं हेम आस्ति मुद्रा कुंडल कटक विषै,
तैसैं वस्तु वर्तनामैं सत्ता अनिवार है ॥
सत्तामैं अनंत परजायकौ सरूप लसै,
सत्ता एकरूप सत्ता नाना परकार है ।
सत्ता प्रतिपच्छ गहै सत्ता सर्वे रूप वहै,
ऐसी सुद्ध सत्ताभूमि द्रव्यकौ विचार है ॥ ६३ ॥

ग्रन्थान्तरासे सत्तासंज्ञा—

सवैया इकतीसा ।

जीवकी अनंत सत्ता जीवतैं अनंतगुनी,
पुदगलानु-सत्ता पै न्यारी न्यारी परी है ।
धर्म द्रव्य एक सत्ता एक है अधर्म-सत्ता,
एक नभ-सत्ता संख बिना काल धरी है ॥
एई छहौंरूप सत्ता द्रव्यभेद विषै मत्ता,
परकै सरूपवत्ता नाना भाव भरी है ।
सत्ताकौ सरूप जानि सुद्ध सत्ता आप मानि,
भ्रमभाव खामि वामि जीवसत्ता तरी है ॥६४॥

दोहा ।

सतो भाव सत्ता कही, सोई अस्ति कहाइ ।
अस्तिरूप सौ दरव है, नानारूप लखाइ ॥ ६६ ॥

चौपाई ।

'है' इस पदको सत्ता कहना, वस्तुमात्रकौं तामैं लहना।
नित्य अनित्य भेद ए दोनौं, वस्तु सोइ जहाँ समरस हौनौं६६
सरवथात्व पद कबहुँ न पावै, स्याद वचन सब सुख उपजावै ।
जो कोई इक रूपकौं मानै, वस्तुरूप सो कबहुँ न जानै ॥६७॥
सबही भाँति नित्य जो कहिए, वस्तुमाहिं क्यौं पलटन लहिए ।
घट पट मठ जैसा कछु जोहै, सबही काल विषै सो सोहै।६८।
अब सुनि छिनक कहै जो सबही, वस्तु तत्व सो लहै न कबही ।
छिनक छिनक कहि जग भटकावै, वस्तुतत्वकौ मरम न पावै ५९

तातैं एक ध्रौव्यपद कोई, उपजै विनसै थिर पुनि सोई ॥
तीनौंरूप अवस्था धारै, वस्तुसरूप सो सत्ता सारै ॥७०॥

दोहा।

उपजै विनसै थिर रहै, तीनौं काल सुछन्द।
सो सत्ता जिननैं कही, और कहैं मतिमंद ॥ ७१ ॥
एक महासत्ता कही, संग्रह नय परवान।
छहौं अवांतर भेद हैं, नय विवहार बखान ॥ ७२ ॥
जो सामानि विसेस है, वस्तु कहावै सोइ॥
छहौं दरवमैं प्रगट है, सो पहिचानौ कोइ ॥ ७३ ॥

अथ सत्ताद्रव्ययोरर्थान्तरत्वं प्रत्याख्याति—गाथा।

दवियदि गच्छदि ताइं ताइं सब्भाव पज्जयाइं जं।
दवियं तं भण्णंते अणण्णभूदं तु सत्तादो ॥ ९ ॥

दोहा।

जो परजायसरूप धरि, नानारूपी होइ।
द्रव्य नाम ताकौ कहैं, सत्ता है पुनि सोइ ॥ ७४ ॥

सवैया इकतीसा।

अपनै सुभाव-गुन-परजै-सरूपकौं जो—
द्रवै, कहै पावत है सोई द्रव्य नाम है।
पाछै द्रव आया अव द्रवै है रु द्रवैगा जु,
तीनौं काल एक परजायरूपी राम है ॥
संख्या नाम लच्छनकै फलरूप चच्छिनकै (?)
द्रव्य सत्ता भेद सधै एक वस्तु धाम है।
जगमैं चतुष्टयसौं सदाकाल पुष्ट लसै
द्रव्यकौ सरूप साधै सोई सिवकाम है ॥ ७५ ॥

दोहा ।

सिवगामी जे जीव हैं, काल लवधिकौं पाइ ।
सत्ता द्रव्य स्वरूपकौं, लखैं जथावत भाइ ॥ ७६ ॥

अथ त्रेधा द्रव्यलक्षणमुपदिशति––गाथा

दव्वं सल्लक्खणियं उप्पादव्वयधुवत्तसंजुत्तं ।
गुणपज्जया सयं वा जं तं भणंति सव्वण्हू ॥ १० ॥

दोहा ।

उपजन विनसन ध्रुवत जुत, सत लच्छिन करि दच्छ ।
गुन परजै जामैं लसै, सो है दरव सुलच्छ ॥ ७७ ॥

सवैया इकतीसा ।

द्रव्य खेत काल भाव वस्तुका सरूप अस्ति,
तातैं सत लच्छिन त्रिकाल द्रव्य कहा है ।
एक जाति अविरोधी पयर्य संतान दृष्टि,
नास उतपाद ध्रौव्य धारा सोई वहा है ॥

....

....

द्रव्य तीनि लच्छिनकै अयुत भाव अच्छिनकै,
जानि जानि ग्यानी जीव जीवद्रव्य गहा है ॥ ७८ ॥

दोहा ।

तीनौं लच्छिन दरवकै, अविनाभाव पिछान ।
नित्य अनित्य समस्त जग, जगै जथावत ग्यान ॥ ७९ ॥

अथोभयनयाभ्यां द्रव्यलक्षणं विभज्यते––गाथा ।

उप्पत्तीव विणासो दव्वस्स य णत्थि अत्थि सब्भावो
विगमुप्पादधुवत्तं करांति तस्सेव पज्जाया ॥ ११ ॥

दोहा।

व्यय उत्पाद न दरवकै, लसत सदा सदभाव।
व्यय उत्पाद ध्रुवत्ताविधि, पर्येयदृष्टि लखाव ॥ ८० ॥

सवैया इकतीसा।

गुन और परजाय दौनौं अस्तिरूप जामैं,
तीन काल एक सोई द्रव्य नाम कहिए।
क्रमभावी-पर्जय सो उपजै विनास होई,
सहभावी ध्रौव्यरूप परजाय लहिए ॥
दरव परजायमैं वस्तुरूप वसै सदा,
तातैं नयकौ विलास तिहूँ काल चहिए।
दरव परजायकै अर्थ नय भेद त्यागि,
मध्यपाती जीवकै अभेद अंग गहिए ॥ ८१

कुंडलिया।

जैनी जिनवानी लखै, दोय नयनका खेल।
एक नयनकै खेलतैं, सकै न अरथ सकेलि ॥
सकै न अरथ सकेलि, केलि परजाय न सूझै।
दरवरूप निरभेद, वेदिवेदक नहिं बूझै ॥
तातैं परजै दरव, अरथ नय एकै सैनी।
साधत सव सिधि होइ, लखै जिनवानी जैनी ॥ ८२ ॥

चौपई।

द्रव्यार्थिकनय द्रव्य दिखावै, पर्यायार्थिक क्रम उपजावै।
दोऊ नै विरोध परहरई, सम्यग्दृष्टि जथावत धरई ॥ ८३ ॥

दोहा ।

सम्यग्दृष्टी जीवकै, जनी जथारथ दृष्टि ।
नयविलासमैं जगमगै, केवलगुनकी दृष्टि ॥ ८४ ॥

अथ द्रव्यपर्यायाणमभेदो निर्दिश्यते—गाथा ।

पज्जयविजुदं दव्वं दव्वविजुत्ता य पज्जया णत्थि ।
दोह्णं अणण्णभूदं भावं समणा परूविंति ॥ १२ ॥

दोहा ।

परजय-विजुद न दरव है, दरव विन न परजाय ।
अजुतरूप दोनौं लसै, कहत सिरीजिनराय ॥ ८५ ॥

सवैया इकतीसा ।

दूध दही घीव छाछि विना ज्यौं गोरस नाहिं,
तैसैं परजाय विना द्रव्यकौ न गावै है ।
गोरस विना ज्यौं दूध दही घीव छाछि नाहिं
द्रव्य विना तैसैं परजाय न कहावै है ॥
तातैं द्रव्य परजाय कहनेमैं भेद सधै,
वस्तुतैं सरूप एक भेद नाहीं भावै है ।
स्यादवादवादी ह्वैकै द्रव्य परजाय जानै,
केवलसरूप भायै मोखरूप पावै है ॥ ८६ ॥

दोहा ।

दरव और परजायमैं, कथनमात्र करि भेद ।
अस्तिरूप परदेस करि, वस्तु सदा निरभेद ॥ ८७ ॥

सोरठा ।

वस्तु एक निरभेद, ग्यान-नयन करि देखतैं ।
कुंडल कटक विभेद, कनक एक दुहुमैं लसै ॥ ८८ ॥

अथ द्रव्यगुणानामभेदो निर्दिश्यते--गाथा ।

दव्वेण विणा ण गुणा गुणेहिं दव्वं विणा ण संभवदि ।
अव्वदिरित्तो भावो दव्वगुणाणं हवदि तह्मा ॥ १३॥

दोहा ।

दरव विना गुन नहिं रहै, गुन विन दरव न होइ ।
अजुतभाव तातैं लसै, दरव-गुननमैं सोइ ॥ ८९ ॥

सवैया इकतीसा ।

जैसैं पुदगल विना रूप रस गंध फास,
तैसैं द्रव्य विना गुन कथना न सोही है ।
जैसैं रूप रस गंध फास विना पुग्गल है,
तैसैं गुनौं विना द्रव्य कहवत विछोही है ॥
तातैं द्रव्य-गुनमाहिं सरवथा भेद नाहिं
अविनाभाव भायेतैं वस्तु नीकै वोही है ।
निकटभव्य जीवौंके हियेमैं तुरत आवै
दूरभव्य पावै नाहिं जैनराज-दोही है॥ ९० ॥

दोहा ।

दरव और गुन और यौं, जुदा करत आदेस ।
वस्तु एक वरतै दुविधि, जुदा न है परदेस ॥ ९१ ।
अनेकान्तविधि वस्तु है, जानै सम्यक नैन ।
एक पच्छ लहि गहि रहैं, मूढ़ न पावैं चैन ॥ ९२ ॥

अथ सप्तभङ्गीवाणी-स्वरूपं निर्दिशति--गाथा ।

सिय अत्थि णत्थि उहयं अव्वत्तव्वं पुणो य तत्तिदयं।
दव्वं खु सत्तभंगं आदेसवसेण संभवदि ॥ १४ ॥

दोहा ।

स्यात अस्ति नासति उभय, अवक्तव्य पुन स्यात ।
तीनौं अकथ मिलापतैं, दरव भंग ए सात ॥ ९३ ॥
अस्ति नास्ति दोऊ अकथ, अस्ति अकथ परमान ।
नास्ति अथक दोऊ अथक, स्यात सहित नै जानि ॥९४॥
सरवथात्व दूरीकरण, अनेकान्त परकास ।
किसही विधि साधै सकल, अन्यय स्यातविलास ॥९५॥

सवैया इकतीसा ।

अपनैं चतुष्टयसौं अस्ति द्रव्य सदाकाल,
परकै चतुष्टयसौं नासति विसेखिए ।
अस्ति नास्ति दौनौंरूप क्रम परिपाटी विषै,
समकाल दौनौं तातैं अवाचीक लेखिए ॥
अस्तिक्रम अवाचीक दौनौं एक भंग लसै,
नास्तिक्रम अवाचीक छट्टा भंग पेखिए,
अस्तिक्रम नास्तिक्रम अवाचीक एक तीनौं
भंग सात सेती वानी जैनग्रन्थ देखिए ॥ ९६ ॥

चौपई ।

इहु सब कथन जुगति करि सारा, आपन परपद सकल विथारा ।
जैसैं सोना वस्तु विराजै, अपनैरूप अनूपम छाजै ॥ ९७ ॥
परकैरूप वस्तु सो नाहीं, 'है नाहीं' दौनौं तिस माहीं ।
जुगपतकाल अवाची सो है, है अवाच इक भंग लसो है ९८

है नाहीं रु अवाची सोना, सप्तम भंग एक रस लेना ।
याही जुगति अनेक प्रकारा, आगम अगम सरूप निहारा ९९
सप्तभंग मुनिजन प्रगटाए, छहौं परव अनुभवन सुहाए ।
एई सप्त भंग जो जानै, सोई निज-पर-पद पहिचानै ॥१००॥

दोहा ।

सप्तभंग सब वचनमैं, जो पहिचानै कोइ ।
सहजभाव तामैं लसै, सिवपद पावै सोइ ॥ १०१ ॥

अथोत्पादस्यासदुत्पादत्वं व्ययस्य सदुच्छेदत्वं निषिध्यते—गाथा ।
भावस्स णत्थि णासो णत्थि अभावस्स चेव उप्पादो ।
गुणपज्जयेसु भावा उप्पादवए पकुव्वंति ॥ १५ ॥

दोहा ।

दरव वस्तुका नास नहिं, नहिं अदरव उतपाद ।
गुन-परजैकरि दरवकै, व्यय उतपाद विवाद ॥१०२॥

सवैया इकतीसा ।

जैसैं घी उपजै तैं गोरस विना न उपजै,
दहीके विनसै नाहिं गोरस विनासा है ।
एक परजाय होइ नासै परजाय एक,
गोरस सदैव सुद्ध भेदकै विकासा है ॥
तैसैं द्रव्य नासै नाहिं होइ द्रव्य नवा कछु,
पर्जयकै लोक माहिं नानाभेद भासा है ।
स्यादवाद अंग सरवंग वस्तु साधि साधि,
सिवगामी जीवहूँनै आतमा निकासा है ॥१०३॥

दोहा।

असत दरवकै उपजतैं, उपजै दरव अनंत।
सत विनासतैं दरव सब, जुगपत नास करंत ॥ १०४॥
तातैं परजैमैं सधै, उपज-विनास अनेक।
दरवरूप सासुत अचल, गुन परजयकी टेक ॥ १०५॥

अथ गुणपर्यायाः कथ्यन्ते--गाथा।

भावा जीवादीया जीवगुणा चेदणा य उवओगो।
सुरणरणारयतिरिया जीवस्स य पज्जया वहुगा ॥ १६॥

दोहा।

जीव आदि भावहु विषै, गुन चेतन उपयोग।
सुर-नर-नारक-पसु विविध, परजै जीव सजोग ॥ १०६॥

सवैया इकतीसा।

ग्यान अनुभूति सोई ग्यान सुद्ध चेतना है,
कर्म कर्मफलरूप मनमैं असुद्ध है।
चेतनानुगामी परनाम सुद्धासुद्धरूप,
भेद निरभेदवान उपयोग लुद्ध है॥
देव-नर-नारक-पसू विभाग परजाय,
सुद्ध दसा सुद्ध परजाय परबुद्ध है।
ऐसैं जीव भाव-परभावसौं जुदा न आप
कालजोग पाय पाय आपहीमैं सुद्ध है ॥ १०७॥

चौपई।

भावनाम ताहीकौं कहिए, जहँ सामानिविसेस हु लहिए।
सहभावी सामानि बखाना, अनुगत सहजभाव परमाना १०८

कादाचित्क जु है परिणामा, सो परजायविसेस विरामा।
जिनमैं गुन परजाय जताये, सदाकाल ते दरव बताये १०९
भाव पदारथ दरव विचारैं, अर्थ एक कहवातिमैं न्यारै।
परजै व्यय उतपाद जुगत है, भाव अचल परमारथगत है ११०

दोहा।

दरवरूपसौं एक है, जदपि अनेक दिखाय।
परजै विविध-विलास गत, उतपति व्यय थिर भाय॥१११॥

अथ भावनाशाभावोत्पादनिषेधोदाहरणं—गाथा।

मणुसत्तणेण णट्ठो देही देवो हवेदि इदरो वा।
उभयत्त जीवभावो णं णस्सदि जायदे अण्णो॥ १७॥

दोहा।

मनुष्यरूप करि नष्ट है, देव इतर गति होइ।
जीवभाव नासै नहीं, उपजै और न कोइ॥ ११२॥

सवैया इकतीसा।

अगुरुलघुक गुन हानि वृद्धि-निषपन्न,
सुद्ध परजायरूप संतति न लाजै है।
एकरूप मानुषीक परजै विनास हुए,
आतमा न नास भयौ तिरोभाव छाजै है॥
देव परजै उपजै आतमा न उपजा है,
दौनौं परजाय माहिं एकभाव साजै है।
सतकौ विनास और असतकौ भाव त्यागि,
ग्यातभाव भाये सुद्ध आतमा विराजै है॥ ११३॥

दोहा ।

जीवभाव उपजै नहीं, विनसै नाहि कदाच ।
सदाकाल जगमैं लसै, चेतनभाव अवाच ॥ ११४ ॥

अथ कथंचिद्व्ययोत्पादत्वेपि द्रव्यस्य कदाचिदनष्टानुत्पन्नत्वं व्याख्याति---गाथा ।

सो चेव जादि मरणं जादि ण णट्ठो ण चेव उप्पण्णो ।
उप्पण्णो य विणट्ठो देवो मणुसोत्ति पज्जाओ ॥ १८ ॥

दोहा ।

उपजै विनसै जीव फुनि, उपजै विनसै नाहिं ।
उपजनि विनसनि लसतु है, सुरनरपरजय माहिं ११५

सवैया इकतीसा ।

लोक परजाय नानारूप धरि डोलै जीव,
मानुष विनास होइ देव अवतरै है ।
दरवरूप देखै नै उपजै न विनसै है,
दौनौंरूप अपनेही आप माहिं धरै है ॥
द्रव्य परजाय सीमा दोऊ समकाल सदा,
एकमेक रहै कोऊ कामैं नाहिं परै है ।
सम्यकसुभाव नैन जगै जथाभेद जगै,
वस्तुकौ सरूप जैसौ तैसौ अनुचरै है ॥ ११६ ॥

दोहा ।

सम्यकदरसी हर समै, जगै जथावत ग्यान ।
जैसौ पद तैसौ लसै, निजमहिमा बलवान ॥ ११७ ॥

अथ सदसतोरविनाशानुत्पादौ स्थितिपक्षत्वेनोपन्यस्तौ—

गाथा।

एवं सदो विणासो असदो जीवस्स णत्थि उप्पादो।
तावदिओ जीवाणं देवो मणुसोत्ति गदिणामो ॥ १९ ॥

दोहा।

सत-विनास नहिं होत है, असत न उपजै राम।
जीव विषै सुर-नर लसै, देव-मनुषगति नाम ॥ ११८ ॥

चौपई।

जो विनसै सो उपजै छिनमैं, जो उपजै सो विनसै छिनमैं।
तातैं सत-विनास नहिं होई, उपजै असत न जगमैं कोई॥ ११९॥
अरु जो देव भयौ अधिकारी, मनुष मुवौ कहवति जगसारी,
सो तो देव मनुषगति नामा, करमाविपाक उदै विसरामा ॥१२०॥
जीवभाव इनमैं है न्यारा, चेतनपुंज अनूपम धारा।
परजय विविध सुसीमा न्यारी, स्यादवादरचना उजुयारी १२१

सवैया इकतीसा।

जैसैं बाँसदंड एक तामैं गाँठ हैं अनेक,
आप आप सीमा विषै अस्तिभाव आया है।
आन गाँठि विषै आन गाँठिका अभाव लसै,
बाँसदंड एक सबै गाँठिमैं समाया है॥
गाँठिकै अभाव विषै दंडका अभाव नाहिं,
तैसैंकै परजै माहिं द्रव्यरूप गाया है।
दरव है नित्य एक परजै अनित्य नैक
नयकै विलासमध्य वस्तुतत्व पाया है ॥ १२२ ॥

दोहा ।

परजै अरथ अनेक विध, दरव माहिं विलसंत ।
दरव अरथ फुनि एकतहि, सासुत अचल महंत ॥ १२३ ॥

अथात्यन्तासदुत्पादत्वं सिद्धत्वस्य निषिध्यते—गाथा

णाणावरणादीया भावा जीवेण सुट्ठु अणुवद्धा ।
तेसिमभावं किच्चा अभूदपुव्वो हवदि सिद्धो ॥ २० ॥

दोहा ।

ग्यानावरनादिक करम, जीवभाव अनुविद्ध ।
तिनकौं नास अभूत करि, होइ अपूरव सिद्ध ॥१२४॥

सवैया इकतीसा ।

जैसें वेणुदंड एक दीरघ प्रचंड लसै,
पूरव अरथ भाग चित्र चित्र कीनै है ।
ताहीभाग दृष्टि देत सगरा असुद्ध दंड,
सुद्धता न भासै कहुँ सुद्ध भावलीनै है ॥
जैसैं ताही दंड विषै ऊरध है खंड सुद्ध,
सारा खंड सुद्ध तातैं सुद्धभाव दीनै है ।
तैसें जीवदर्व सुद्धासुद्धरूप जानै भव्य,
मानै सुद्ध सारा द्रव्य मिथ्याभाव हीनै है॥१२५॥

चौपई ।

जीव दरवकै नामकरमतैं, देवादिक भव होइ भरमतैं ।
थोराकाल मिलापी जीकै, अपनै उदै काल परनीकै ॥ १२६ ॥
तिनमहिं एक विनास हि पावै, निजकारण विन छिन न रहावै ।
उपजै नवा स्वकारणवलतैं, अद्भुतरीति लसै अनमिलतैं १२७

सत-विनास उतपत्ति असतकी, नाहिं न भई जथावत मतकी।
तैसैं ही फुनि जीवदरवमैं, वहुतकाल अन्वयी सरवमैं ॥१२८॥
संसारी परजाय कहावै, करमउदै वहुकाल वहावै।
भव्यजीवकै कारन निवरा, निवरा सवै अनादि जु तिमिरा १२९
सिद्धपनौ जु अभूत अपूरव, सोई आनि भयौ जु अपूरव
पै तथापि नहिं सत्व विनासा, असतभावकौ नाहिं न भासा॥

दोहा।

संसारी संसार महिं, मुकति माहिं सिवरूप।
दोऊ-नय-ग्याता लखैं, वस्तुसुभाव अनूप॥ १३०॥

सोरठा।

वस्तुसुभाव अनूप, सवैरूप भरपूर है।
ज्यौं जगमैं नरभूप, सकल काजकौं करि सकैं॥ १३१॥

अथैतत्सर्वमुपसंहरति—गाथा।

एवं भावमभावं भावाभावं अभावभावं च।
गुणपज्जयेहिं सहिदो संसरमाणो कुणदि जीवो॥ २१॥

दोहा।

उपजै विनसै सत असत, असतभाव उतपाद।
गुनपरजै करि सव वनै, जथाथान अपवाद॥ १३२॥

सवैया इकतीसा।

दरवरूप देखैतैं उपजै न विनसै है,
जीव अविनासी नित्य ग्रंथनिमैं वनै है।
देवपरजाय पावै भाव करता कहावै,

नरभौ अभावतैं अभावरूप सनै है ॥
देव सत्यरूप नासै भावाभाव करता है,
आनभाव जानैतैं अभाव भाव चनै है।
सब ठीक कहात स्याद्वादकै बखान विषै,
जथाथान नीकै लसै श्रीजिनेस भनै है ॥ १३३ ॥

सवैया तेईसा।

नित्य अनित्य रु भाव अभाव है, एक अनेक भली विध सारै।
कारन कारज साधन साध्य, सुव्यापक व्याप दोऊ निरवारै ॥
हेय अहेय सुग्यान है ग्येय, सबै सनबंध सरूप विचारै।
स्यादसुवाद सबै विधि साधक, बाधक राग विरोध बिडारै१३४

दोहा।

दरव कथन परजै कथन, गौन मुख्य विवहार।
सबै कथनमैं यह कथन, अनुभौ हित निरधार ॥ १३५ ॥

इति षड्द्रव्यसामान्यप्ररूपणा।

अथ सामान्येनोक्तलक्षणां षण्णां द्रव्याणां मध्ये पंचानामास्तिकायत्वं व्यवस्थाप्यते--गाथा।

जीवा पुग्गलकाया आयासं अत्थिकाइया सेसा।
अमया अत्थित्तमया कारणभूदा हि लोगस्स ॥ २२ ॥

दोहा।

जीवपुग्गलाकास फुनि, अस्तिकायका सेष।
अकृत अस्तिमय लोककै, कारणरूप विसेष ॥ १३६ ॥

सवैया इकतीसा ।

जीवकाय-पुग्गल औ धर्मा-धर्म-व्योम नाम,
एई पाँचौं अस्तिकाय नीकैकै विचारै हैं ।
किये न कराये काहु अपनेउ माहिं लसै,
सत्तारूप सबहीमैं अस्तिता समारै हैं ॥
नानारूप लोककै हैं कारन सरूप सदा,
परदेस पुंज तातैं कायरूप सारै हैं ।
काल काय विना यातैं इनमैं कहावै नाहिं,
सबकै सरूप ग्यांनी ग्यानमैं निहारै हैं ॥ १३७ ॥

चौपई ।

जीव नाम पुग्गल आकासा, धरम अधर्म पंच परकासा ।
एई अस्तिकाय अवधारै, अकृतकत्वगुन सदा समारै ॥ १३८ ॥
उपजै विनसै थिर नित पावैं, अस्तिरूप तातैं जिन गावैं ।
सकल लोककै कारन मानै, लोकभाव इन विन न पिछानै १३९
बहुत प्रदेस एकता काया, इनमैं बसै अनूपम छाया ।
कालअनूमिल एक न हौंहीं, काल काय न कहावत क्यौंही १४०

दोहा ।

पंच अस्तिकाया सकल, रह्यौ जगत भरपूर ।
ग्यानी सगरै सब लखैं, रंच न जानै कूर ॥ १४१ ॥

अथास्तिकायत्वेनानुक्तस्यापि कालस्यार्थापन्नत्वं द्योत्यते—गाथा ।
सब्भावसभावाणं जीवाणं तह य पोग्गलाणं च ।
परियट्टणसंभूदो कालो णियमेण पण्णत्तो ॥ २३ ॥

दोहा।

जीव विषै पुग्गल विषै, सत-सुभाव परिनाम।
परिवर्तन कारन लसै, कालदरव अभिराम॥ १४२॥

सवैया इकतीसा।

जीव पुदगल विषै अस्ति परिनाम विषै,
उपजै विनासै ध्रौव्य धारावाही वगै है।
तामैं जेती बार लगै तेता विवहार काल,
याहीतैं निहचै काल अनू नाम लगै है॥
पराधीन विवहार निहचै सुभावाधीन,
अनू परिनाम लोकमान नीकै पगै है।
लोक विवहार तीनौं काल जथाभेद सधै,
जैनी जिनवानीमाहिं साचा भेद जगै है॥ १४३॥

दोहा।

वरनादिक गुनरहित जे, अगुरु-लघुक-गुनवंत।
वरतनलच्छ अमूरती, काल दरव विगसंत॥ १४४॥

अथ निश्चयकालस्वरूपं निरूप्यते—गाथा।

ववगदपणवण्णरसो ववगददोगंधअट्ठफासो य।
अगुरुलहुगो अमुत्तो वट्टणलक्खो य कालोत्ति॥ २४॥

दोहा।

पंच वरन रस गंध दुअ, आठ फरस बिन टाल।
अगुरुलघुक मूरति बिना, वरतन लच्छन काल॥ १४५॥

सवैया इकतीसा।

जैसैं सीतकाल विषै कोऊ नर पाठ करै,
अपनै सुभाव ताकौं आगका सहारा है।

जैसैं कुंभकारचक्र अपनै सुभाव भ्रमै,
पै परदंडकीलीनै भ्रमीकौं समारा है ॥
तैसैं पाँचौं द्रव्य विषै परिनाम नित्य ताकौ,
निहचै काल अनूनै नीकैकै विचारा है ।
सोई काल अनूरूप वरतना लच्छिन है,
मूरत विना ही सारे जगमैं निहारा है ॥ १४६ ॥

चौपई ।

अव जो तरक करै कोउ ऐसैं, नभ अलोकमैं परिनत कैसैं ।
ताकौ संबोधन कछु जैसौ, ग्रंथविषै अनुभौ सुनु तैसौ ॥१४७॥

सवैया इकतीसा ।

जैसैंकै परस इंद्री एक जागा परसैतैं,
परसका विषै स्वाद सारे अंग व्यापै है ।
जैसैं साँप काटै और व्रन आदि एक अंग,
सवै अंग दुखी होइ जीव परलापै है ॥
तैसैं लोकमध्य काल अपने सुभाव सेती,
सवही अलोकमध्य परिनाम सापै है ।
काल तौ सहायकारी परिनामधारी नभ,
वस्तुका सरूप तातैं वस्तुमाहिं आपै है ॥ १४८ ॥

दोहा ।

यातैं काल भला दरव, जगत माहिं विलसंत ।
सवै दरव परिनामकौं, सदा सहाय करंत ॥ १४९ ॥

अथ व्यवहारकालो निरूप्यते— गाथा।

समओ णिमिसो कट्ठा कला य णाली तदो दिवारत्ती।
मासोदुअयणसंवच्छरोत्ति कालो परायत्तो ॥ २५ ॥

दोहा।

समय निमिस काष्ठा कला, नाली दिन अरु रात।
मास बहुरि रितु अयनविधि, वरस काल परजात ॥१५०॥

सवैया इकतीसा।

परमानु उलटै की वरतना समै नाम,
नैनौंपुटबीचि लसै नैमिस सुहाया है।
तैसैं ही विसेष संख्या काष्ठा कला नाली नाम,
रविके उदोतमान बासर कहाया है॥
संध्यातैं प्रभात तांई रतिनाम दौनौं मिलै,
अहोरात काल संख्या ग्रंथमैं जताया है।
मास ऋतु अयन है वर्ष परसिद्ध एता
परके निमित्तकाल बाहिर बहाया है॥ १५१ ॥

दोहा।

एकाकी कालानुकी, लखिय न परत लगार।
तातैं पर-संजोग करि, पराधीन विवहार॥ १५२ ॥

अथ व्यवहारकालस्य कथंचित्परायत्त्वे सदुपपात्ति—गाथा।

णत्थि चिरं वा खिप्पं मत्तारहिदं तु सा वि खलु मत्ता।
पुग्गलदव्वेण विणा तह्मा कालो पडुच्चभवो ॥ २६ ॥

दोहा।

चिर थोरा जो भेद है, मात्रारहित न जान।
मात्रा पुग्गल बिन नहीं, काल प्रतीति बखान॥ १५३ ॥

सवैया इकतीसा।

लोक-विवहारविषै चिर सीघ्र भेदविषै,
विना परिनाम ताकौ भेद कैसैं पाइए।
परकी अपेच्छा विवहारकाल कहा ऐसा,
निहचै अनन्यभाव स्यादवाद गाइए॥
काय ताकै नाहीं कही अस्तिभाव सदा सही,
द्रव्यनाम पावै तातैं वस्तुरूप भाइए।
पुग्गल-परिनाम ताकौ परिनाम करै तातैं,
ताकौ उद्योतकारी पुग्गल बताइए॥ १५४॥

दोहा।

पुग्गल-जीवविषै लसै, रूपान्तर परिनाम।
ताकौ कारन काल है, निहचै लोक-विराम॥ १५५॥
समयनाम व्याख्याविषै, ह्याँलगि कीनी पीठ।
पंचासतिकायाकथन, दरवसहित मुनि दीठ॥१५६॥

इति समयव्याख्यायामन्तर्नीतषट्द्रव्यपञ्चास्तिकाय-
सामान्यव्याख्यानरूपः पीठबंधः।

अथामीषामेव विशेषव्याख्यानं क्रियते। तत्र तावज्जीवद्रव्या-
स्तिकायव्याख्यानं—गाथा।

जीवोत्ति हवदि चेदा उवओगविसेसिदो पहूकत्ता।
भोत्ता य देहमत्तो ण हि मुत्तो कम्मसंजुत्तो॥ २७

दोहा ।

जीव चेतना-गुनसहित, उपयोगी प्रभु उत्त ।
करता भुगता देहसम, नहिं मूरत भव-जुत्त ॥ १५७ ॥

सवैया इकतीसा ।

निहचै और व्यौहार प्रानधारनतैं जीव,
चेतनसकति तातैं चेतना वखानी है ।
उपयोग-योग भाव-दरव-करमकारी,
तत्वनिमैं मुख्य तातैं प्रभुता समानी है ॥
सुभासुभ-कर्म-फल-भोगता सरीर लसै,
देहमात्र अवगाह मूरतीक मानी है ।
कर्मसंजोगधारी विविध भेद संसारी,
मुक्त अविकारी तातैं सुद्धता निदानी है ॥१५८॥

दोहा ।

जे कुवादि मिथ्यामती, मानैं नहिं सरवग्य ।
तिनकौं इह उपदेश सव, कहत जैनधरमग्य ॥ १५९ ॥

अथ मुक्तस्यात्मनो निरुपाधिकस्वरूपं निरूप्यते—गाथा ।

कम्ममलविप्पमुक्को उड्ढं लोगस्स अंतमधिगंता ।
सो सव्वणाणदरसी लहदि सुहमणिंदियमणंतं ॥ २८ ॥

दोहा ।

सरव करम-मलरहित निज, उर्द्धलोककै अंत ।
सर्वग्यानदरसी सुखी, इंद्रियरहित अनंत ॥ १६० ।

सवैया इकतीसा ।

भाव-दरव-करममलसौं वियोग भयौ,
ऊरध सुभावगति लोकअंत वासी है ।
धरमदरव विना आगै गतिका अभाव,
ताहीतैं मुगति माहिं चेतना विलासी है ॥
सुद्ध ग्यानदरसमैं लोकालोक भासमान,
केवल सुछंद आपरूप अविनासी है ।
इंद्रिय-रहित-सुख अनुभौ अनंतकाल,
एकरूप निरावाध सिद्ध मोखवासी है ॥ १६१ ॥

चौपई ।

अब कछु सुनहु सिद्धकी वातैं, सिद्धरूप लखिलीजै तातैं ।
सुख-सत्ता-अवगम-चेतना, चारौं प्रान सुद्ध लेखना ॥ १६२ ॥
यातैं जीवपना सिद्धालै, नीकै सम्यक-नैन निहालै ।
चेतकता फुनि तामैं सगरै, चेतायिता तातैं विन झगरै ॥ १६३ ॥
चित-परिनाम-विराम सुहाया, सो उपयोग जोग विन भाया ।
सब अधिकार-सगति है तिनमैं, प्रभुता वड़ी लसै छिनछिनमैं ॥
निजसरूप निरवर्तनहारा, तातैं करतापन उजियारा ।
निरावाध निरआकुलताई, तातैं सुख भोगता वड़ाई ॥१६५॥
चरम-शरीर-मान-किंचूना, देहमात्र कहवति कछु ऊना ॥
औपाधिक संबंध जुदाई, लसै अमूरत गुन ठकुराई ॥१६६॥
संजुग-तत्व करमका नाहीं, करमविजोग मोखपद माहीं ।
अब सुनि दरव-करमकी धारा, पुग्गलखंध अनेक प्रकारा १६७

भावकरम चेतना जु परतैं, दौनौं करम अनादी अरतैं ।
चेतनसकति मंदता पकरी, ग्यानावरनादिककरि जकरी॥१६८॥

जुगपत सगरा जगत पिछानै, क्रमकरि एकोदेस बखानै ।
जब ग्यानावरनादिक नासै, तब सब जुगपत जग परकासै १६९

चित-सरूप-रूपस्थबलंबी, ग्येयाकारबिंब न विलंबी ।
चेतन-सकति अनूपम धारा, उमगि चली नहिं होइ निवारा ॥

तब यह चेतन निहचै जाना, सरवग्यान-दरसन-सुखसाना ।
अरु फुनि दरवकरमका कारन, भावकरम-कर्तृत्व निवारन १७१

औपाधिक सुख-दुख-परिनामा, भुगतापना भया विसरामा ।
इहै अनादि खेद सब निवरा, निजसरूप अनुभौरस निखरा १७२

निज सुखरसका रसी अनीका, सिद्धसरूप विराजै नीका ।
काल अनंत अचल अविनासी, दरसन ग्यान सकल सुखरासी ॥

दोहा ।

सुख-सत्ता-अवबोध-दृग, चारौं प्रान सुछंद ।
सिद्धजीवकै सुद्ध हैं, संसारी मतिमंद ॥ १७४ ॥

अथ सिद्धस्य निरुपाधिकज्ञान-दर्शन-सुख-समर्थनं—गाथा ।
जादो सयं स चेदा सव्वण्हू सव्वलोगदरसी य
पप्पोदि सुहमणतं अव्वाबाधं सगममुत्तं ॥ २९ ॥

दोहा ।

स्वयं-चेत-सरवग्यता, सरवलोकदृग साध ।
सुख अनंत पावै सुकिय, बिन मूरत बिन बाध॥१७५॥

सवैया इकतीसा ।

ग्यान-दृष्टि-सुख-सत्ता साहजीक भाव लसै,
संसारमैं वसै जौलौं तौलौं कर्म छाया है ।
इंद्रियसहाय क्रम कछू कछू जानै देखै,
मूरत व्यावाध सांत सुखाभास भाया है ॥
कर्म सारै नासैतैं आप असहाय भासै,
जुगपत जानै विश्व देखत सवाया है ।
मूरत व्यावाध विना सुखकौ अनंत लसै.
सिद्धगतिविषै सिद्ध आतमा सुहाया है ॥ १७५॥

दोहा ।

नास्तिवाद जामैं लसै, सो चार्वाक अजान ।
ताका संवोधन भला, इह सरवग्य प्रमान ॥ १७६ ॥

अथ जीवतत्त्वव्याख्यानं—गाथा ।

पाणेहिं चदुहिं जीवदि जीवस्सदि जो हु जीविदो पुव्वं ।
सो जीवो पाणा पुण बलमिंदियमाऊ उस्सासो ॥ ३० ॥

दोहा ।

प्रान चारि तिहुँकालमैं, जीवत सो पुन जीव ।
वल-इंद्रिय-उस्सास फुनि आयु जु प्रान सदीव॥१७७॥

सवैया इकतीसा ।

वल-इंद्रिय-आयु-उछास नाम प्रान चारि,
भाव-दरव-भेदतैं दुविध वखान है ।

चेतनतारूप जो जो सो सो भाव प्रान लसैं,
पुदगल पिंडरूपी दरव-परान है ॥
तीन कालविषैं प्रान-संतति सुछंदरूप,
याहीतैं जगत माहिं जीव अभिधान है ।
मुगतिमैं चेतनादि भावप्रान धारनतैं
सुद्ध जीव-भेद सोई अनुभौ प्रमान है ॥ १७८ ॥

दोहा ।

सुद्ध-प्रान सिवजीवकै, सदाकाल आदेय ।
संसारी परजोगतैं, विकल वहिर्मुख हेय ॥ १७९ ॥

अथ जीवानां स्वाभाविकं प्रमाणं मुक्तामुक्तविभागश्च कथ्यते—

गाथा ।

अगुरुलहुगा अणंता तेहिं अणंतेहिं परिणदा सव्वे ।
देसेहिं असंखादा सियलोगं सव्वमावण्णा ॥ ३१ ॥
केचित्तु अणावण्णा मिच्छादंसणकसायजोगजुदा ।
विजुदा य तेहिं वहुगा सिद्धा संसारिणो जीवा ॥ ३२ ॥

दोहा ।

अगुरूलघुक अनंत करि, परिनत जीव अनंत ।
देस असंख कथं च विधि, व्यापी लोक महंत ॥ १८० ॥
केचितु अव्यापक सदा, मिथ्या-मोह-कषाय— ।
जोग-जुगति संसारमैं, विजुत सिद्ध बहु भाय ॥ १८१ ॥

सवैया इकतीसा ।

अविभागी एक जीव ताकै परदेसपुंज,
सूखिम है अनूमान तेई अंत लसै है ।

अगुरू-लघु-सरूप-साधक सुभाव तामैं,
लागै बिना भेद ताकै हानिवृद्धि रसै हैं ॥
लोक पूरनैकी समै लोकव्यापी जीव कह्या,
और समै देहमान जीवदेस कसै हैं ।
मिथ्या औ कषाय-योग-संपति अनादि जोगी,
संसारी विजोगी सिद्ध मोख माहिं वसै हैं ॥ १८२॥

दोहा ।

नैयायिक मीमांसकी, सांखमताश्रित जीव ।
तिनकौं सवोधन सुहित, यहु सब कथन सदीव॥१८३॥

सवैया तेईसा ।

द्रव्यविषै अगुरुत्व लघुत्व, सुभाव-सरूपका साधक साजै ।
जातैं जु द्रव्य रहै जग मध्य, नहीं तर नीचैकै ऊँचैकौ भाजै ॥
तामैं अभेद लसै परिछेद, सोई प्रतिरूपक पत्त समाजै ।
वृद्धि रु हानि लसै षटथानक, ताहीतैं द्रव्य अनूपम राजै १८४

दोहा ।

हानि विरधिकै भेद सब, वरतै गुन परकार ।
दरवरूप सासत सदा, एकरूप निरधार ॥ १८५ ॥

अथ जीवस्य देहमात्रत्वे दृष्टान्तः—

जह पउमरायरयणं खित्तं खीरे पभासयादि खीरं ।
तह देही देहत्थो सदेहमत्तो पभासयदि ॥ ३३ ॥

दोहा ।

पद्मराग ज्यौं खीरमैं, सगरै खीर प्रकास ।
त्यौं देही देहीविषैं, देहमात्र अवकास ॥ १८६ ॥

सवैया इकतीसा।

जैसैं पद्मरागमनि दूधकै समूह मध्य,
अपनै उद्योतकरि सारै दूध व्यापै है।
आगि-योग पाय दूध वढ़ै प्रभाखंध वढ़ै,
दूध घटै प्रभा घटै दोऊ एक मापै है॥
तैसैं छोटी बड़ी देह-धारी जीव करमतैं,
ताहीकै प्रमान तामैं आपरूप धापै है।
तातैं देहमान जीव निहचै सदैव कह्या,
देहकै विलायै सिद्ध देहमाप आपै है॥ १८७॥

दोहा।

लोक-असंख्य-प्रदेससम, निहचै जीव बखान।
देहमात्र विवहारकरि, दोऊ नय परमान॥ १८८॥

अथ देहाद्देहान्तरास्तित्वं देहात्पृथक्भूतत्वं देहान्तरगमनकारणं च जीवस्योपन्यस्याति— गाथा।

सव्वत्थ अत्थि जीवो ण य एक्को एक्ककायएक्कट्ठो।
अज्झवसाणविसिट्ठो चिट्ठदि मलिणो रजमलेहिं॥ ३४॥

दोहा।

जीव अस्ति सर्वत्र है, नहिं इक देहमिलाप।
अध्यवसान-विसिष्ट है, रजमल-मलिन-प्रताप॥१८९॥

सवैया इकतीसा।

संसारी अवस्था माहिं क्रमवरती सरीर,
तातैं जीव देहधारी नाना देह धरै है।

खीरनीर एक जैसैं जीव देह एक दिखै।
भिन्नता सुभाव तातैं एकता न करै है।
पूरव दरव-करम-उदैमैं नवा भाव,
तातैं दर्वकर्म नवा नानारूप धरै है।
ताव दर्वकर्मउदै देह नानारूप सधै,
तातैं देह भिन्न जानि ग्यानी जीव तरै है॥१९०॥

दोहा।

यहु सव कथन सयानपन, कहत सयाने लोग।
सुनि सयान स्याने भये, जे अयान गतरोग॥१९१॥

अथ सिद्धानां जीवत्व–देहमात्र-व्यवस्था निरूप्यते–गाथा।

जेसिं जीवसहावो णत्थि अभावो य सव्वहा तस्स।
ते होंति भिण्णदेहा सिद्धा वचिगोयरमदीदा॥ ३५॥

दोहा।

जिनकै जीव सुभाव हैं, नहिं अभाव कहि होइ।
भिन्न देहतैं सिद्ध हैं, कहि करि सकै न कोइ॥१९२॥

सवैया इकतीसा।

सत्ता-सुख-ग्यान-दृष्टि चारौं सुद्ध भाव-भान,
सिद्ध सदैव यातैं जीवता सुहाई है।
कारन कषाय-जोग सिद्धविषैं नास तातैं,
देहसौं अतीत देहगाहना रहाई है॥
लोक-मान देह नाहीं सुद्ध-मान गाह माहीं,
निरुपाधिरूप सोई प्रभुता दिखाई है।

महिमा अनंत ताकी वचनकै अंत थाकी,
भाव-श्रुत-सार जाकी रचना बनाई है ॥ १९३ ॥

दोहा ।

सिद्ध सिद्धगतिमैं लसैं, करि निषिद्ध परभाव ।
देहमात्र अवगाहना, सुद्ध सरूप बढ़ाव ॥ १९४ ॥

अथ सिद्धस्य कार्यकारणभावनिरासः—गाथा ।

ण कुदोचि वि उप्पण्णो जह्मा कज्जं ण तेण सो सिद्धो ।
उप्पादेदि ण किंचि वि कारणमवि तेण ण स होदि ॥ ३६ ॥

दोहा ।

काहूकरि उपज्यौ नहीं, तातैं कारिज नाहिं ।
उपजावत नहिं कासकौं, कारन नहिं तिसु माहिं ॥१९५॥

सवैया इकतीसा ।

जैसैंकै भाव-दरव-कर्म परिनामनितैं
देव-नर-नारकादि काजरूप होई है ।
जैसैं देव आदि नाना कारज करत जीव,
कारन-सरूप तातैं एकरूप सोई है ॥
तैसैं सिद्ध-जीव दोऊ करम विनासकरि,
आपरूप आप भया दूजा नहिं कोई है ।
उपजै न नवा किछू नवा उपजावै नाहिं,
जैसा रूप तैसा लसै सिद्धभाव जोई है ॥ १९६ ॥

दोहा ।

उपजनि खपनि सुभाव नाहिं, जीवदरवका होइ ।
उपजनि खपनि विभावता, पुग्गल परिणति सोइ ॥१९७॥

कारन-काज-विभाव विधि, संसारी महिं साध।
सिद्धविषै यहु विधि नहीं, केवलग्यान अवाध ॥ १९८ ॥

अथ जीवाभावो मुक्तिरिति निरस्यते--गाथा।

सस्सदमध उच्छेदं भव्वमभव्वं च सुण्णमिदरं च।
विण्णाणमविण्णाणं णावि जुज्जादि असदि सब्भावे ॥ ३७ ॥

दोहा।

सासुत विनसै भव्य है, अरु अभव्य फुनि सुन्न।
ग्यान अग्यान असुन्नता, सतविधि सव परिपुन्न ॥ १९९ ॥

सवैया इकतीसा।

दरव निजरूपतैं सासुता सदीव लसै,
परजै अनेक मतिसमै समै छेदिएं।
सदा भूत परजैसौं भाव्य नाम पावै सदा,
परजै अभूतसौं अभाव्य नाम वेदिएं ॥
परकै सरूप सुन्न अपने असुन्न जीव,
कहूं है अनन्तग्यान कहूं सांत खेदिए।
कहूं स्वल्प नल्प कहूं सांत औ अजान कहूं,
ऐसा सव भेद एक जीवसत्ता भेदिए ॥ २०० ॥

चौपई।

बिविध भेद जामैं नित पावै, विधि निषेध सब भेद कहावै।
सो सतभाव अभाव न करई, तीन काल आपनपौ धरई ॥२०१॥
तातैं सिद्धाविषैं सो सत है, सवै भेद कहवाति सो हत हैं।
भव्यजीवकौ अनुभौ ज्ञायक, सिद्धसरूप सदा अनुभायक २०२

अथ चेतयितृत्वगुणाः व्याख्यायन्ते– गाथा ।

कम्माणं फलमेक्को एक्को कज्जं तु णाणमध एक्को ।
चेदयदि जीवरासि चेदगभावेण तिविहेण ॥ ३८ ॥

दोहा ।

एक करमफल अनुभवै, एक करम इक ग्यान ।
जीवरासि चेतक लसै, त्रिविध चेतना जान ॥ २०३ ॥

सवैया इकतीसा ।

मोहसौं मलीन जीव छादित है ग्यानभाव,
दुःख-सुखरूप कर्म-फलकानुभोगी है ।
दुख-सुख-लहरीमैं राग-दोष-मोह वसै,
ग्यानावरनादि नाना कर्मका नियोगी है ॥
मोहमूल दूरि भयौ कर्म सर्व नासि गयौ,
सुद्ध-चेतना-विलास ग्यान उपयोगी है ।
कर्म-मल-कर्मरूप चेतना असुद्ध हेय,
उपादेय सुद्ध-ग्यान चेतनानुजोगी है ॥ २०४ ॥

चौपई ।

जीवदरव चेतना सु लच्छिन, चेतक करतारूप विचच्छिन ।
तामैं क्रिया चेतना राजै, जीवदरवकी परिनति छाजै ॥२०५॥
ता परिनतिके भेद सुहायै, सुद्ध असुद्ध यथावत गायै ।
जीव अनादिमोह संसारी, सकल असुद्ध क्रिया अनुसारी २०६
सुख-दुख लोक-मगनता मानी, सो चेतना करम-फल जानी ।
मोहमलिन चेतक-गुन सारा, राग दोष परगुन उजियारा २०७

करम-अनू मिलि एकै होई, करमचेतना कहिए सोई।
या परकार चेतना दौनौं, हेय अशुद्धरूप जग होनौं २०८
कालजोग सब मोह विलावै, करमकलंक एक विघटावै।
सहज सकति चेतकता भासै, करम करमफल सगरौ नासै २०९
एकरूप स्वाभाविक सो है, ग्यानचेतना तब जग मोहै।
ग्यान एक चेतन परकासै, करम करमफल नैक न भासै२१०
सुद्ध चेतना ग्यान कहानी, अपर असुद्ध चेतना मानी।
उपादेय फुनि सगरै कीनी, सुद्ध सुभाव ग्यानरस लीनी॥२११॥

अथ कः किं चिन्तयति इत्युच्यते--गाथा।

सव्वे खलु कम्मफलं थावरकाया तसा हि कज्जजुदं।
पाणित्तमदिक्कंता णाणं विंदंति ते जीवा॥ ३९॥

अडिल्ल।

सरव करमफल-मगन सु थावरकाय है।
अवर करमफल-लगनि सु त्रस वहु भाय है॥
दस प्राननिकरि रहित सिवालय सिद्ध है।
ग्यानरूप अनुभवै सु चेतन रिद्ध है॥ २१२॥

सवैया इकतीसा।

चेतै अनुभवै वेदै एते नाम भेद माहिं,
चेतना क्रियाका अर्थ एक रूप सारै है।
तातैं जो थावरकाय सो करमफल वेदै,
त्रसकाय जीव कर्म-चेतना विचारै है॥

सिद्धगतिविषै सिद्ध ग्यान-क्रियारूप वेदै,
ग्यानचेतनामैं एक सुद्ध-ग्यान धारै है।
यातैं दौनौं असुद्ध सुद्ध ग्यानचेतना है,
ग्यानी सरवंग सुद्ध-चेतना निहारै है ॥ २१३ ॥

दोहा।

सुद्ध-चेतना ग्यान है, अरु असुद्ध अग्यान।
ग्यानरूप ग्यानी लखै, अग्यानी अग्यान ॥ २१४ ॥

अथ उपयोगगुणव्याख्यानं—गाथा।

उवओगो खलु दुविहो, णाणेण य दंसणेण संजुत्तो।
जीवस्स सव्वकालं अणण्णभूदं वियाणीहि ॥ ४० ॥

दोहा।

ग्यान और दरसन अवर, दोइ भेद उपयोग।
अविनाभावी जीवकै, जानत ग्यानी लोग ॥ २१५ ॥

सवैया इकतीसा।

चेतना क्रियाका अनुगामी परिनाम सो है,
सोई उपयोग नाम जीवगुन गाया है।
तामैं दोइ भेद लसै ग्यान-दृगरूप यामैं,
ग्यान है विसेष ग्राही नानाकार पाया है ॥
भेदभाव झारिकरि जाति सामान दरसी,
दर्सनोपयोग सोई निराकार भाया है।
वस्तु है अभेद उपयोग जीव नाम भेद,
अस्ति एकरूप स्यादभाषाने बताया है ॥ २१६ ॥

दोहा।

सुद्ध असुद्ध सुभावकरि, उपयोगी दुय भेद।
तजि असुद्ध पहिली दसा, सुद्ध सुभाव निवेद ॥२१७॥

अथ ज्ञानोपयोगविशेषाणां नामस्वरूपाभिधानं- गाथा।

आभिणिसुदोधिमणकेवलाणि णाणाणि पंचभेयाणि।
कुमदिसुदविभंगाणि य तिण्णिवि णाणेहिं संजुते ॥ ४१ ॥

दोहा।

अभिनिवोध-श्रुत-अवधि-मन,-परजै-केवलग्यान।
कुमति-कुश्रुत-विभंग है, तीन अग्यान समान ॥ २१८ ॥

सवैया इकतीसा।

आतमा अनादि ग्यानवान कर्म-छादित है,
इन्द्री-मन-द्वार कछू मानै मतिग्यान है।
मनकौं आलंवी सब्द-अर्थरूप श्रुतग्यान,
मूरतीक अनू जानै अवधि वखान है ॥
परमनोगत जानै सोई मनपरजै है,
सारै दरव जानै सो केवल प्रमान है।
तीनौं आदि मिथ्या उदै कुग्यान कहावै सुद्ध,
ग्यानकै जगेतैं सारै मोखका निसान है ॥ २१९ ॥

ग्यानावरन समान घन,-छादित रविसम ग्यान।
छयोपसम ज्यौं ज्यौं लहत, त्यौं त्यौं प्रगटत भान ॥ २२० ॥

अथ मत्यादिपंचज्ञानानां क्रमेण गाथापञ्चकेन व्याख्यानं करोति-

गाथा।

"मदिणाणं पुण तिविहं उवलद्धी भावणं च उवओगो।
तह पंचदूवियप्पं दंसणपुव्वं हवदि णाणं ॥ १ ॥

दोहा।

अर्थलब्धि भावन प्रगट, उपजुंजन मतिग्यान।
अथवा चारि विकल्प मति, दरसन पूरवजान॥ १॥

सवैया इकतीसा।

निहचै अखंड बुद्ध ग्यानरूप आतमा है,
विवहारनय ग्यान कर्मसौं लपेट्या है।
मतिग्यानावरणकै छयोपसम पायतैं,
इन्द्री-मन-द्वार कछु जानत उलेख्या है॥
मूरत अमूरतकौं विकलपसेती लखै,
सोई मतिग्यान तीन भांति अर्थ-भेख्या है।
अर्थ-उपलंभ और अर्थरूप भावनातैं
अर्थ-उपयोग होतैं मतिकर्म मेट्या है॥ २॥

कुंडलिया।

मतिग्यानावरणी करम, छय उपसमतैं होइ।
अरथ-गहनकी सकति उप,-लबंधि कहावै सोइ॥
लबधि कहावै सोइ, अरथकौं पुन पुन चितवै।
अरथ-भावना नाम, करमकौं छिन छिन रितवै॥
नील पीत आकार, विविध परजय ठहराना।
सो उपयोग बखान, करम विनसै मतिग्याना॥ ३॥

दोहा।

सत्ता अवलोकन दरस, तिस पूरव मतिग्यान।
चारि अवग्रह आदि विच, प्रगटत सब मतिमान॥ ४॥

निरविकार सुद्धातमा, तसु अभिमुख मतिरूप ।
सो सम्यक मतिग्यान है, और सकल भ्रमकूप ॥ ५ ॥

अथ श्रुतज्ञानस्वरूपं—गाथा ।

सुदणाणं पुण णाणी भणंति लद्धी य भावणा चेव ॥
उवओगणयावियप्पं णाणेण य वत्थु अत्थस्स ॥ २ ॥

दोहा ।

ग्यानीजन श्रुतकौं कहत, लबधि-भावनारूप ।
देस सकल जानै अरथ, नय-परमान अनूप ॥ ६ ॥

सवैया इकतीसा ।

श्रुतग्यानावरनीकै छयोपसम हुएतैं,
मूरत अमूरतकौं सब्द माहिं जानै है ।
सोही श्रुतग्यान लब्धि-भावनारूप लसै
नय-परमान नीकै दोई भेद ठानै है ॥
वस्तु है अनंतधर्मा तामैं एक धर्म नय,
सबही धरमग्राही परमान मानै है ।
सुद्ध ग्यान-दरसन-सुभाव श्रुत है
सोई उपादेय श्रीजिनवर बखानै है ॥ ७ ॥

दोहा ।

सबदरूपकौं श्रवन करि, जानै अरथ विचार ।
सो श्रुतग्यान विमल समल, जानै सम्यकधार ॥ ८ ॥

अथावधिज्ञानस्वरूपं—गाथा ।

ओही तहेव घेप्पद्ध देसं परमं च ओहिसव्वं च ।
तिण्णवि गुणेण णियमा भवेण देसं तहा णियदं ॥ ३ ॥

दोहा ।

देस परम सरवावधी, अवधि तीन परकार ।
सम्यक गुनकरि दुविध है, भवमति देस विचार ॥ ९ ॥

छप्पय ।

अवधिग्यान-आवरन, जवहिं छय उपसम पावै ।
तव मूरतकौं लखै, अवधि परतच्छ कहावै ॥
ताकै तीन विचार, कहै जे ऊपर तेई ।
लवधि भावनारूप, अवर उपयोग मिलेई ॥
पुन देस परम सर्वाअवधि, तीन भेद आगम लिखै ।
अंतिम सरीरकै दुविध है, देस अमर-नारकविखै ॥ १० ॥

दोहा ।

चरमदेह मुनिराज जे, धरैं तपस्या भार ।
परमावधि सरवावधि, तिनहीकै अवधार ॥ ११ ॥

अथ मनःपर्ययज्ञानस्वरूपं—गाथा ।

विउलमदी पुण णाणं अज्जवणाणं च दुविह मणणाणं ।
एदे संजम-लद्धी उवओगो अप्पमत्तस्स ॥ ४ ॥

दोहा ।

ऋजुमति विपुलमती मन,—परजय संजमलाभ ।
अप्रमत्त मुनिराजकै उपयोगातम आभ ॥ १२ ॥

सवैया इकतीसा ।

मनपरजै-ग्यानावरनी करमकै नासै,
परकै मनकी जानै सोई मनपरजै ।

मन-वच-काय-गत अर्थ वक्रावक्र जानै,
सोई विपुलमती है लोकभाव करजै ॥
वर्तमानसमै जानै सोई ऋजुमती नाम,
दौनौं मनपरजैका भेद सदा गरजै ।
संजमतैं लाभ होइ बुद्ध उपयोग जोइ,
अप्रमत्त मुनिराज और ठौर वरजै ॥ १३ ॥

दोहा।

चरमसरीरी जीवकै, होइ विपुलमतिग्यान।
अप्रमत्तगुनथानतैं, जब है संजमवान ॥ १४ ॥

अथ केवलज्ञानस्वरूपं—गाथा।

णाणं णेयणिमित्तं केवलणाणं ण होदि सुदणाणं ।
णेयं केवलणाणं णाणाणाणं च णत्थि केवलिणो ॥ ५ ॥

दोहा।

केवल ग्येय-निमित्त नहिं, केवल नहिं श्रुतग्यान।
केवल ग्यानाग्यान नहिं, केवल केवल मान ॥ १५ ॥

सवैया इकतीसा।

ग्येयका निमित्त पाय केवलग्यान नाहीं है,
श्रुतग्यानरूप नाहीं केवल सुजानिए ।
यद्यपि दिव्यवानीतैं श्रुतग्यानी ग्यानी होइ,
केवल तथापि सदा केवल प्रमानिए ।
मतिग्यान आदि कोई केवलमैं नाहिं देखै,
सारा विश्व योगपद्य इंद्री बिना जानिए ।

सदा असहाय एक ग्यान ग्यानरूप लसै,
नित्य अविनासीरूप केवल बखानिए ॥ १६ ॥

दोहा ।

केवल केवलग्यान है, नहिं उपाधिकी ठौर ।
जब उपाधि ऊपरि लगै, तब केवल नहिं और ॥ १७ ॥

अथ ज्ञानत्रयस्वरूपं—गाथा ।

मिच्छत्ता अण्णाणं अविरदभावो य भावआवरणं ।
णेयं पडुच्च काले तह दुण्णय दुप्पमाणं च ॥ ६ ॥

दोहा ।

मिथ्यातैं अग्यान है, अविरत समकितहान ।
ग्येयरूप जाननविषै दुरनय दुरपरमान ॥ १८ ॥

सवैया इकतीसा ।

मिथ्या-करमउदैतैं अग्यान कहावै तीन,
तातैं अविरत-भाव सदाकाल होई है ।
तत्व-अर्थ-श्रद्धारूप भाव समकित नासै,
तातैं भाव मिथ्यारूप जीव माहिं कोई है ॥
और ग्येयरूपविषै मिथ्याग्यानपना होइ,
मिथ्या आचरनरूप मूढ़भाव जोई है ।
दुष्ट-नयाधीन और दुःप्रमान साधनासै,
दुराराधि जीव डोलै अग्यरूप सोई है ॥ १९ ॥

दोहा ।

कुमति कुश्रुत जु विभंग है, तीन अग्यान विख्यात ।
मिथ्या-करम-प्रभावतैं, जीव तत्व बहकात ॥ २० ॥

नोट—" मदिणाणं पुण तिविहं " इस गाथासे लेकर " मिच्छत्ता अण्णाणं " इस गाथा पर्यन्त छह गाथायें क्षेपक हैं। पं० हीरानन्दजीने ज्ञानका स्वरूप समझानेको किसी अन्य ग्रन्थसे इन्हें यहाँ लिख दिया है और उनकी भाषा भी बनादी है। मूल पञ्चास्तिकायमें ये गाथायें नहीं हैं और न इनकी अमृतचंद्राचार्य कृत टीका है। इसी कारण इनका नम्बर क्रमसे न दिया जाकर एक-दोके क्रमसे डाला गया है।

अथ दर्शनोपयोगस्य नामस्वरूपाभिधानं—गाथा।

दंसणमवि चक्खुजुदं अचक्खुजुदमवि य ओहिणा सहियं।
अणिधणमणंतविसयं केवलियं चावि पण्णत्तं ॥ ४२ ॥

दोहा।

चच्छु अचच्छु अवधि लसै, केवल दरसन चारि।
अनिधन अनंतविषयी विमल, केवलदरसन धारि ॥२२१॥

सवैया इकतीसा।

दरसनावरनीसौं छादित अनादि जीव,
छय-उपसम चच्छु इंद्रीकरि देखै है।
चच्छु विना सेप चारि इंद्री मनसा विचारि,
मूरत अमूरतीक दरवकौं पेखै है ॥
पुदगल-परमानू-सीमा देखै सो अवधि,
सारै दरव देखै सो केवल विसेखै है।
तीनौं परभाव हेय पहिलै विनासी भेय,
केवल सुभाव एक उपादेय लेखै है ॥ २२२ ॥

दोहा।

दरसन-ग्यान विसेप गुन, जीवदरवकै सार।
सकल दरवसौं कहत है, भेदभाव निरधार ॥ २२३ ॥

अथैकस्यात्मनोनेकज्ञानात्मकत्वसमर्थनं--गाथा।

ण वियप्पदि णाणादो णाणी णाणाणि होंति णेगाणि।
तह्मा दु विस्सरूवं भणियं दवियत्ति णाणीहि ॥ ४३ ॥

दोहा।

ग्यानी ग्यान जुदा नहीं, ग्यान अनेक प्रकार।
विस्वरूप तातैं कह्या, द्रव्य ग्यान जिन सार ॥ २२४ ॥

सवैया इकतीसा।

ग्यानीजीव द्रव्य कह्या ग्यानगुन तामैं लह्या,
गुनगुनी भेद तातैं एकवस्तु माहीं है।
दौनौं माहिं अस्ति एक तातैं एक द्रव्यपना,
दौनौं तौ अभिन्न एक खेत परछाहीं है ॥
दौनौं एकसमैवर्त्ती तातैं एककाल लसै,
दौनौंकै सुभाव एक एक-भावता ही है।
द्रव्य विस्वरूप एक गुन है अनेक तामैं,
वस्तु स्यादवाद-सधै एकतान नाहीं है ॥ २२५ ॥

दोहा।

एक कहत वनती नहीं, नाहिं अनेककी ठौर।
अनेकांतमय वस्तु है, सिवमारगकी दौर ॥ २२६ ॥

अथ द्रव्यस्य गुणेभ्यो भेदे गुणानां च द्रव्याद्भेदे दोषोपन्यासः—

गाथा।

जदि हवदि दव्वमण्णं गुणदो य गुणा य दव्वदो अण्णे।
दव्वाणंतियमधवा दव्वाभावं पकुव्वंति ॥ ४४ ॥

दोहा ।

दरव आन गुनतैं जबहिं, दरवथकी गुन आन ।
तबही दरव अनंतता, अथवा दरव न जान ॥ २२७ ॥

सवैया इकतीसा ।

गुन द्रव्य-आश्रय है आश्रयी कहावै द्रव्य,
दौनौं है अविनाभावी जुदा कौन गनै है ।
जौ पैं जुदा द्रव्य तौ पैं गुन और द्रव्य चहै,
सौ भी द्रव्य जुदा गुन और द्रव्य चहै है ॥
ऐसैंही अनंत द्रव्य दूषण महंत तातैं,
द्रव्यथकी जुदा गुन यौं भी नाहीं रहै है ।
गुन-समुदाय-द्रव्य लच्छिन विनास होइ,
द्रव्यका अभाव तातैं स्यादवादी कहै है ॥ २२८ ॥

दोहा ।

गुन अरु गुनीविषै लसै, तादातम संबंध ।
भिन्नभावकै लखत ही, वस्तु न देखै अंध ॥ २२९ ॥

अथ द्रव्यगुणानां स्वोचितानन्यत्वोक्तिः—गाथा ।

अविभत्तमणण्णत्तं दव्वगुणाणं विभत्तमणणत्तं ।
णिच्छंति णिच्चयण्हू तव्विवरीदं हि वा तेसिं ॥ ४५ ॥

दोहा ।

अविभक्तत्व अनन्यता, दरव-गुननिमैं होइ ।
विभक्तत्व अन्यत्व फुनि, निहचैरूप न कोइ ॥ २३० ॥

सवैया इकतीसा ।

जैसैं एक परमानू अपने परदेससौं,
अविभागी सदाकाल सो अनन्य वाचै है ।
रूप-रस-गंध-फास अविभक्त गुन सदा,
आनता न परदेस तैसैं एक वाचै है ॥
जैसैं दूर सह्य विंध्य एकमेक दूध तोय,
प्रविभक्त देसनिसौं अनन्यता जाचै है ।
तैसैं द्रव्य गुन जुदै देससौं अनन्य नाहिं,
तातैं अविभक्त देससौं अनन्य साचै है ॥ २३१ ॥

दोहा ।

जुदा होइ जो नहिं रहै, जुदा न लच्छिन माहिं ।
सो अनन्य इक वा लसै, देसभेद तहि नाहिं ॥ २३२ ॥

सोरठा ।

देसभेद तहि नाहिं, तादातम संबंध जहि ।
जुदै नाम दिखराहिं, वस्तु एक दुय भेद है ॥ २३३ ॥

अथ व्यपदेशादीनामेकान्तेन द्रव्यगुणान्यत्वे निबन्धनत्वमत्र प्रतिख्यायते—गाथा ।

ववदेसा संठाणा संखा विसया य होंति ते बहुगा ।
ते तेसिमणण्णत्ते अण्णत्ते चावि विज्झंते ॥ ४६ ॥

दोहा ।

व्यपदेस रु संठान गनि, संख्या विषय कहाव ।
ए इनकै अन्यत्वमैं, अनन्यत्वमैं भाव ॥ २३४ ॥

सवैया इकतीसा।

कारक बखान वस्तु भेद औ अभेद माहिं,
सोई व्यपदेस नाम द्रव्य-गुनविषै है।
आकृति विसेष वस्तुरूप संसथान लसै,
संख्या गनना प्रकार भला भेद विषै है॥
द्रव्य है अधार सदा गुन है आधेय तामैं,
ऐसा विषै भेद नाम वस्तु एक सिखै है।
तातैं व्यपदेस आदि भेदभाव दिखै तौ भी,
देसभेद सधै नाहिं स्यादवाद लिखै है॥ २३५॥

चौपई।

अब सुनि इनकी प्रगट कहानी, अमृतचंद्र कहवति परमानी।
व्यपदेसादि भेद ए सगरै, भेद अभेद कथन मत झगरै २३६
प्रथम रूप व्यपदेस सुहाया, भेद कथन नैयायिक भाया।
जैसैं देवदत्तकी गैया, जुदी वस्तु संबंध लखैया॥ २३७॥
तैसैं तरुकी साखा राजै, गुन सब दरव-वस्तुकै छाजै।
यहु संबंध अनन्य कहावै, तादातम विधिभेद लखावै २३८
जैसैं देवदत्त फल बीनै, अंकुसकरि धनदतकै लीनै।
तरुतैं गोद माहिं सब डारै, ए सब कारक अन्य विथारै २३९
तैसैं आतम आपहि जानै, आपहिकरि अपनौ हित ठानै।
आपनतैं आपनमहिं सारा, यहु अनन्यकारक विस्तारा २४०
अब सुनि संसथानका व्यौरा, जथाभेद कहियत है थोरा।
जैसैं देवदत्त-तनु फूला, ताकी गौ विराजै मूला॥ २४१॥

येहू अन्य लसै संसथाना, अव अनन्य कहियत है थाना ।
तैसैं दीरघतरुकी डारा, दीरघ लसै अनन्य विचारा २४२
मूरतीक गुन मूरत धनकै, यहु अनन्य संस्थान सवनकै ।
जैसैं देवदत्तकै कहिए, दस गायनकी संख्या लहिए २४३
तैसैं एक वृक्ष दस साखा, एक द्रव्य गुन अनगन भाखा ।
येहु अनन्य कहवति परिनीका, संख्याकथन कहावति टीका२४४
जैसैं गोष्टविषै है गाई, तैसैं तरुसाखा सुखदाई ।
दरवविषै गुन गनना पावै, विषै अनन्य जिनेस वतावै ॥२४५॥
इहविधि व्यपदेसादिक भेदा, दरवगुननिमैं लसै अभेदा ।
तातैं जिनवानीमैं बनै, स्यादवाद जैनी जिन भनै ॥ २४६ ॥

दोहा ।

जे व्यपदेसादिक कहै, दर्व-गुननिमैं भेद ।
स्यादवादकरि ते लसै, जथाथान विन खेद ॥ २४७॥

अथ वस्तुभेदाभेदोदाहरणं—गाथा

णाणं धणं च कुव्वदि धणिणं जह णाणिणं च दुविधेहिं ।
भण्णंति तह पुधत्तं एयत्तं चावि तच्चण्हू ॥ ४७॥

दोहा ।

ग्यानथकी ग्यानी लसै, धनतैं है धनवान ।
एक माहिं अरु आन महिं, यौं दौनौं विधि जान ॥२४८॥

सवैया इकतीसा ।

जैसैं धनपती दोइ मित्र मित्र अस्ति ताकै,
भिन्न भिन्न संसथान भिन्न संख्य गनै है ।

भिन्न विषै दौनौं माहिं एक परदेस नाहिं,
धनी ऐसा नाम पावै अन्य एक बनै है ॥
तैसें ग्यान जीव माहिं एक अस्ति एक संस,–
थान एक संख्या एक विषै भेद वनै है ।
ग्यानी व्यपदेस एक एकता प्रकार माहिं
तैसें सब भेद नीकै श्रीजिनेस भनै है ॥ २४९ ॥

दोहा ।

जो अन्यत परकार है, तउ (?) अन्यत परकार ।
सो सब जिनवानीविषै, जथासरूप विहार ॥ २५० ॥

अथ द्रव्यगुणानामर्थान्तरभूतत्वे दोषोपन्यासः—गाथा ।
णाणी णाणं च सदा अत्थंतरिदा दु अण्णमण्णस्स ।
दोण्हं अचेदणत्तं पसजदि सम्मं जिणावमदं ॥ ४८ ॥

दोहा ।

ग्यानी-ग्यानविषै सदा, अर्थांतर जो होइ ।
दुहू अचेतकता लहै, सम्यक जिनमत सोई ॥ २५१ ॥

सवैया इकतीसा ।

ग्यानीकौं ग्यानतैं जुदा जौ पैं कहै कोई नर,
तौ पैं करनाच्छ बिना कैसें जीव चेतै है ।
ग्यानी विना ग्यान तौ पैं कारण कर्तृत्व विना,
चेतक विना ही ग्यान मूढ़-भाव लेतै है ॥
ग्यानी ग्यान जुदै मिलै चेतना सुभाव तौ पैं,
द्रव्य कौन गुन कहाँ अस्तिरूप रेतै है ।

तातैं ग्यान ग्यानी विषै भेदता अभेद विषै,
स्यादवाद साधि सकै तो पैं मोछि कैतै है ॥२५२॥

चौपई।

जैसैं करवत धारी कोई, काठचीरना कारज सोई।
जो कहुँ करवत हाथ न आवै, तौ काहेकरि काठ छिदावै ॥२५३॥
अर जो करवत होइ अकेला, काठचीरना प्रगट दुहेला।
चरिनहारै बिन कौं चीरै, करवत काठ जदपि है नीरै ॥२५४॥
तातैं छिदन क्रिया संपूरन, करवत पुरुष दोउ जब पूरन।
तैसैं ग्यानी ग्यान जुदाई, ग्येय जानता बनै न भाई ॥२५५॥
एकमेक जो कहिए दौनौं, तौ है ग्यप्ति क्रियाका होनौं।
तातैं अविनाभावी कहिए, स्यादवाद जिनवानी लहिए ॥२५६॥

दोहा।

इहु सब कथन मथन करत, चलै जात मुनिराज।
सकल अरथ जातैं सफल, स्यादवादसौं काज ॥२५७॥

अथ ज्ञानज्ञानिनः समवायसंबन्धनिरासः—गाथा।

णहि सो समवायादो अत्थंतरिदो दु णाणदो णाणी।
अण्णाणीति च वयणं एगत्तप्पसाधगं होदि ॥ ४९ ॥

दोहा।

ग्यानी ग्यान जुदा नहीं, ग्यान नहिं समवाय।
अग्यानी इति वचनतैं, एकरूप प्रकटाय ॥ २५८ ॥

सवैया इकतीसा।

ग्यान-समवायथकी ग्यानी नाम पावै जीव,
समवाय विना भेद ग्यानीके अग्यानी है।

जौ पैं ग्यानी नाम तौ पैं ग्यान-समवाय वृथा,
  अग्यानी कहावै तौलौं झूठीसी कहानी है ॥
ग्यानीकै अग्यान समवाय होतैं ग्यानी नाहिं,
  अग्यानी अग्यान तातैं एकता वखानी है ।
ऐसा जान ग्यान-सेती ग्यानीकौं अनन्य साधै,
  सोइ समकिती जीव मोखका निदानी है ॥२५९॥

दोहा ।

दरव और गुन और है, और कहत समवाय ।
नैयायिक-मत मानतैं, वस्तुरूप नसि जाय ॥ २६० ॥
जुदी वस्तु जो एकही, है संजोग सँबंध ।
सो समवाय कहावतै, जानत नहिं जात्यंध ॥ २६१ ॥

अथ समवायस्य पदार्थान्तरत्व-निरासः-गाथा ॥

समवत्ती समवाओ अपुधब्भूदो य अजुदसिद्धो य ।
तह्मा दव्वगुणाणं अजुदा सिद्धित्ति णिद्दिट्ठा ॥ ५० ॥

दोहा ।

समवरती समवाय है, अपृथक नहिं जुद-सिद्ध ।
तातैं दर्व-गुनौंविषै, अजुत-सिद्धकी वृद्धि ॥ २६२ ॥

सवैया इकतीसा ।

द्रव्य-गुन माहिं एक अस्तिका सरूप लसै,
  आदि अंत विना सोई सहवृत्ति धारै है ।
समवरती कहावै समवाय जैनग्रंथ,
  संग्या आदि भेद तातैं वस्तु एक सारै है ॥

दोऊ अपृथकभूत जुदी अस्ति कोई नाहिं,
यातैं अजुतसिद्ध जुतता विडारै है।
तातैं सर्व गुन माहिं ए विसेष सगरै है,
जैनी समकिती जीव नीकैकै विचारै है ॥ २६३॥

दोहा।

समवरती समवाय है, कहत सयाने लोग।
ते अयान जानै नहीं, जिन हिय मिथ्यारोग ॥२६४॥

अथ दृष्टान्तपुरस्सरं द्रव्यगुणानामनर्थान्तरत्वमुपन्यस्यते—गाथा।

वण्णरसगंधफासा परमाणुपरूविदा विसेसा हि
दव्वादो य अणण्णा अण्णत्तपगासगा होन्ति ॥ ५१ ॥
दंसणणाणाणि तहा जीवणिबद्धाणि णण्णभूदाणि।
ववदेसदो पुधत्तं कुव्वंति हि णो सभावादो ॥ ५२ ॥

दोहा।

परस-वरन-रस-गंध ए, पुग्गलदरव विसेष।
दरव माहिं जु अनन्य है, अन्यप्रकासक देख ॥ २६५ ॥
दरसन-ग्यान तथा लसै, जीव अनन्य सुभाव।
प्रथकभाव व्यपदेसतैं, निजतैं नहिं प्रकटाव ॥ २६६ ॥

सवैया इकतीसा।

रूप-रस-गंध-फास पुदगलानुरूपी है,
एक अविभक्त परदेसतैं कहाये है।
अनु सो अनन्यसंज्ञा व्यपदेससेती अन्य,
अन्य परकार तातैं ताहींमैं लहाये है ॥

ऐसैंही ग्यान-दरसन-सुभाव आतमा है,
आपतैं अनन्यदेस एकता दिखाये है।
व्यपदेस आदि भेद तातैं भेदसा दिखाय,
देसभेद विना दौनौं जिननै बताये है॥ २६७॥

दोहा।

जीवदरवकै गुन कहै, दरसन ग्यान अनन्य।
भेदभाव विवहारमैं, वरतै भेद अगन्य॥ २६८॥

अथ कर्तृत्वगुणव्याख्यानं—गाथा।

जीवा अणाइणिहिणा संता णंता य जीवभावादो।
सब्भावदो अणंता पंचग्गगुणप्पधाणा य॥ ५३॥

दोहा।

जीव अनादि-निधन कहै, सांत अनंत जु भाव।
सत्तारूप अनंत है, पंच मुख्य गुन भाव॥ २६९॥

सवैया इकतीसा।

सहज चेतन्य पारिनामिक सुभावकरि,
आदि अंत विना जीव जगमैं वसतु है।
औदयिक औपसम छायोपसमिक तातैं,
सादिसांत साद्यनंत छायिकं रसतु है॥
सवही उपाधि गये छायक प्रगट भाव,
साद्यनंत वनै तौकै मूढ़ता नसतु है।
सत्ता अनंतीजीव करम-पंकलीन डौलै,
पंचभाव भाये सेती ग्यानी है लसतु है॥ २७०॥

दोहा।

जीव अभव्य अनंत है, तिनतैं भव्य अनंत।
तिनतैं बहुरि अभव्यसम, भव्य अनंत महंत ॥२७१॥
करम-पंक-मल-मलिन है, जैसैं तोय मलीन।
पंचभाव-विधि परनवै, नानारूप अधीन ॥ २७२ ॥

अथ जीवस्य भाववशात्सादिनिधनत्वे साद्यनिधनत्वे च विरोध-परिहारः—गाथा।

एवं सदो विणासो असदो जीवस्स होइ उप्पादो।
इदि जिणवरेहिं भणिदं अण्णोण्णविरुद्धमविरुद्धं ॥ ५४ ॥

दोहा।

सत विनसै उपजै असत, जीवभाव असमान।
यहु विरोध अविरोध है, जिनवर कथन प्रमान ॥२७३॥

सवैया इकतीसा।

इनहीं पंच भावौंसौं जीव परिनवै सदा,
तातैं औदयिकरूप प(न)रभाव नासै है।
देवभाव असता है ताका उतपात करै,
यामैं तो विरोधभाव नैक न विकासै है॥
दर्व-नैन देखै सेती दर्व एक सासुता है
परजै-नैन होतासा नासतासा भासै है।
दर्व परजाय दौनौं नयका विलास जातैं,
ग्यानी वस्तुतत्व पावै मोखवास पासै है ॥२७४॥

दोहा।

दरवलखन परजैलखन, जो लखि जानै जीव।
सिवमारग सोई लखै, जगमैं मुगत सदीव ॥ २७५ ॥

अथ जीवस्य सदसद्भावोच्छित्त्युत्पत्तिनिमित्तोपाधिप्रतिपादनं—

गाथा।

णेरइयतिरियमणुआ देवा इदि णाम संजुदा पयडी।
कुव्वंति सदो णासं असदो भावस्स उप्पादं॥ ५५॥

दोहा।

सुर-नर-नारक-तिरक-गति, नाम-प्रकृति-परधान।
सत-विनास उपजनि असत, करत सदा विविधान॥२७६॥

सवैया इकतीसा।

जैसैं जलरासि माँहिं असतका उतपाद,
सतका उच्छेद नाहिं तोयरासि नामी है।
तामैं क्रमरूप वहै लहरी-समूह सोई,
उपजै उछेद होइ तोय विसरामी है॥
तैसैं जीवभावविषै सतका उछेद और,
उपजे असत नाहिं क्रमभाव भामी है।
क्रममैं उदीयमान चारौं गति नाम-कर्म,
उदै नास करै भेद जानै सिवगामी है॥ २७७॥

दोहा।

सिवगामी नामी सुसुख, सिव-सुख-मगन सरूप।
सिवमारग अनुहारि जे, ते गुरु सेव अनूप॥ २७८॥

अथ जीवस्य भावोदयवर्णनं—गाथा।

उदयेण उवसमेण य खयेण दुहिं मिस्सिदेहिं परिणामे।
जुत्ताते जीवगुणा बहुसुय अत्थे सु विच्छिण्णा॥ ५६॥

दोहा।

छायिक उपसम उदय है, छय-उपसम परिणाम।
पंच भाव ए जीवकै, वहुत अरथकै धाम॥ २७९॥

सवैया इकतीसा।

कर्म-फल-ऊदैरूप औदयिकभाव लसै,
उदैका अभाव भाव औपसम जान्या है।
उदै अन उदै दोऊ छय-उपसम भाव,
कर्मकै विनास सेती छायिक वखान्या है॥
दर्वरूप लसै जातैं सोई परिनाम कहै,
एई पाँचौं भाव जीवधारक प्रमान्या है।
चारि हैं असुद्ध हेय सुद्ध एक छायिक है,
सोई उपादेय कालजोगतैं पिछान्या है॥२८०॥

दोहा।

इनहीं पाँचौं भावका, करता जीव सदीव।
काल-लवधि-बलतैं लसै, छायकभाव सुकीव॥ २८१॥

अथ जीवस्यौदयिकादिभावानां कर्तृत्वप्रकारः—गाथा।

कम्मं वेदयमाणो जीवो भावं करेदि जारिसयं।
सो तेण तस्स कत्ता हवदित्ति य सासणे पढिदं॥ ५७॥

दोहा।

जीव करम-चेतन जवहिं, जैसा भाव करेइ।
तैसाका करता रहै, जिनसासन प्रगटेइ॥ २८२॥

सवैया इकतीसा ।

दर्वकर्म चेतै जीव लोकविवहार माहिं,
तातैं दर्वकर्म जीवभावौंका निमित्त है ।
नाना राग-दोष-रूप जीवौंके विभाव बढ़ै,
ताहीका करता जीव जग माहिं नित्त है ॥
चारि हैं असुद्ध भाव परकै निमित्त सेती,
एक परिनामी भाव सदा सुद्ध वित्त है ।
परका निमित्त डारि अपना सरूप धारि,
सुद्ध-भाव करता है सोई समचित्त है ॥ २८३ ॥

दोहा ।

भाव-करम करता रहै, निहचै जीव असुद्ध ।
सुद्ध-भाव करतार फुनि, निहचै सुद्ध प्रबुद्ध ॥ २८४ ॥

अथ द्रव्यकर्मणां निमित्तमात्रत्वेनौदयिकादिभावानां कर्तृत्वं—

गाथा ।

कम्मेण विणा उदयं जीवस्स ण विज्झदे उवसमं वा ।
खइयं खओवसमियं तह्मा भावं तु कम्मकदं ॥ ५८ ॥

दोहा ।

करम विना ए होहिं नहिं, उदय और उपसंत ।
छय-उपसम छय जीवकै, तातैं करम करंत ॥ २८५ ॥

सवैया इकतीसा ।

करम विना जीवौंके उदय औ औपसम,
छय औ छयोपसम कहौ कैसैं मानिए ।

तातैं च्यारौं एई दर्वकर्मकी अवस्थारूप,
सुद्ध परिनामवस्था जीवकी वखानिए ॥
इनहीं अवस्था माहिं जीव-परिनाम जोई,
सोई भावकर्मरूप चारौं भेद ठानिए।
यातैं दर्वकर्मरूप हेतु भाव-कर्मका है,
असद्भूतनय तातैं जग माहिं जानिए ॥ २८६ ॥

चौपई।

परिनामिक निरुपाधि कहावै, स्वाभाविक सहभाव दिखावै।
लसै अनादि अनंत दरवकै, निजपरिनाम सरूप सरवकै २८७
छायिकभाव करमकै खयतैं, सादि अनंत सुभाव अखय तैं।
कर्मउदै जब उपसम पावै, तब औपसमिकभाव कहावै २८८
ऐसैं करम उदैतैं जानौ, भाव प्रगट औदयिक बखानौ।
छय-उपसम फुनि याही विधि है, उदयाभाव समन परिसिध है॥
तातैं करम किये यौं मानी, करम निमित्त लसै परधानी।
असद्भूत यहु नय विस्तारा, जानहु जिनवानी करि सारा २९०

दोहा।

इनमैं छायिकभाव जो, सादि अनंत कहाय।
सोई सम्यकवंतकौं उपादेय दिखराय ॥ २९१ ॥

अथ जीवभावस्य कर्मकर्तृत्वे पूर्वपक्षोपन्यासः—

गाथा।

भावो जदि कम्मकदो अत्ता कम्मस्स होदि किध कत्ता।
ण कुणादि अत्ता किंचि वि मुत्ता अण्णं सगं भावं ॥ ५९ ॥

दोहा।

करम करै जो भावकौं, तौ जीव न करतार।
निज-सुभाव तजि और कछु, जीव न करै त्रिकार॥२९२॥

सवैया इकतीसा।

औदयिक आदिभाव जीवकै सुभाव कहै,
जौ तौ दरवकर्मरूप इनका करैया है।
तौ तौ भावकर्मका करता जीव नाहिं सूझै,
भावका अकरतार लोकका फिरैया है॥
ऐसी सो तौ वनै नाहिं भावकर्म दुरे जाहिं
तातैं अपनै भावोंका आपमैं वरैया है।
दर्वकर्म कौन कहौ और याकौं करै कौन,
आनमती जीव पूछै पच्छका धरैया है॥ २९३॥

दोहा।

गुरुकौं पूछै सिष्य इक, मिथ्यामतकारि वौन।
भाव-करम यहु जीवका, दरव-करम कहो कौन॥२९४॥

अथ पूर्वपक्ष सिद्धान्तः—गाथा।

भावो कम्मणिमित्तो कम्मं पुण भावकारणं हवदि।
ण दु तेसिं खलु कत्ता ण विणा भूदा दु कत्तारं॥ ६०॥

दोहा।

भाव करमतैं होत है, करम भावतैं होइ।
कोकि सही करता नहीं, करता विना न कोइ॥२९५॥

सवैया इकतीसा ।

विवहारनय देखै कारन है दर्वकर्म—
रूप तातैं जीव भारी (?) दर्वकर्म मान्या है ।
नवा कर्म बंधन है जीवभाव कारनतैं,
तातैं दर्वकर्म हेतु जीवभाव जान्या है ॥
निहचै सरूप कोई करता काहूका नाहिं,
वस्तुका सरूप वस्तु माहिं पहिचान्या है ।
जीवभाव जीव करै दर्वकर्म कर्म करै,
ग्याता सुद्धरूप जानि मिथ्यामोह भान्या है २९६

दोहा ।

भाव करै सब दरवकौं, दरव करै सब भाव ।
निमित निमितकै भावतैं, सोहै सकल कहाव ॥२९७॥

अथ जीवस्य कर्तृत्वं—गाथा ।

कुव्वं सगं सहावं अत्ता कत्ता सगस्स भावस्स ।
ण हि पोग्गलकम्माणं इदि जिनवयणं मुणेदव्वं ॥ ६१ ॥

दोहा ।

निज-सुभाव करता सता, जीव करै निजभाव ।
पुग्गल-करम करै नहीं, यहु जिनवचन लखाव ॥ २९८ ॥

सवैया इकतीसा ।

निहचैकै जीव एक अपना सुभाव करै,
सुद्ध अथवा असुद्ध जगमैं सुछंद है ।

परका सरूप तिहुं कालविषै नाहिं चरै,
परका करैया नाहिं चेतनाका कंद है ॥
परकी परछाँहीकौं परैरूप करता है,
आपा-पर-भासमान आतमा अनंद है ।
केवल प्रतच्छ ज्ञानी सुद्ध आतमा कहानी,
जानी जिन जीव ताकौं वंदना अमंद है ॥ २९९ ॥

दोहा।

सुद्ध असुद्ध सुभावका, जीव-दरव करतार ।
पुग्गल दरव-करम करै, असदभूत-विवहार ॥ ३०० ॥

अथ निश्चयनयेनाभिकारकत्वात्कर्मणो जीवस्य च स्वरूपकर्तृत्वं—

गाथा।

कम्मं पि सगं कुव्वदि सेण सहावेण सम्ममप्पाणं ।
जीवो वि य तारिसओ कम्सहावेण भावेण ॥ ६२ ॥

दोहा।

करम करै निजभावकौं, निज-सुभावकरि लीन ।
तैसैं जीव सदा लसै, निज-सुभाव परवीन ॥ ३०१ ॥
निहचै नै कारक छहौं, वस्तु अभेद बखान ।
जो यहु जानै भेद सब, सो नर सम्यकवान ॥ ३०२ ॥

सवैया इकतीसा।

कर्मरूप पुग्गल है सोई करताररूप,
पावनेकौ जोगि परिनामरूप कर्म है ।

कर्मरूप पाइवेकी सक्तिरूप करन है,
कर्मरूप आश्रयका संप्रदान धर्म है ॥
एकरूप नास भयै आप ध्रौव्य अपादान,
आश्रयमान रूपका आधारत्व पर्म है।
एई छहौं कारकसौं कर्मपरिनाम लसै,
निहचै अभेद अंग कर्मरूप सर्म है ॥ ३०३ ॥

अथ कर्मजीवयोरन्योन्याकर्तृत्वेऽन्यदत्तफलान्योपभोगलक्षणपुरस्सरः पूर्वपक्षः—गाथा ।

कम्मं कम्मं कुव्वादि जादि सो अप्पा करेदि कम्माणं ।
किध तस्स फलं भुंजादि अप्पा कम्मं च देदि फलं ॥ ६३ ॥

दोहा ।

करम करमकौं जो करै, अरु अपनैकौं आप ।
कैसैं फल आतम लहै, करम देइ फल-ताप ॥ ३०४ ॥

सवैया इकतीसा ।

पुग्गलानु जैसैंकै अपना करम करै,
औरकी अपेच्छा नाहिं वस्तुरूप लागै है ।
ऐसैं ही आतम आप भाव-सुद्धासुद्ध करै,
परकी अपेच्छा नाहिं आपरूप जागै है ॥
आन कर्म आन फल ताका भोगवतहारा,
आन कहौ कैसै बनै साचा अंग भागै है ।
स्यादवाद जैनीजीव वस्तु जथाथान साधै,
निहचै विवहारीकै वस्तुतत्व आगै है ॥ ३०५ ॥

दोहा।

करम करै फल भोगवै करमरूप परिनाम।
जीव करै नहिं भोगवै, निहचै सम्यकधाम॥ २०६॥

अथ सिद्धान्तः—गाथा।

ओगाढगाढणिचिदो पोग्गलकायेहिं सव्वदो लोगो।
सुहमेहिं वादरेहिं य णंताणंतेहिं विविहेहिं॥ ६४॥

दोहा।

सूच्छम-वादर-भेदकरि, नंतानंत प्रकार।
विविधभाँति पुग्गल-खचित, सकल लोक अनिवार २०७

सवैया इकतीसा।

जैसेंकै अंजनचूर संपुट संपूरनमैं,
रीती ठौर कोइ नाहिं अंजन घनाई है।
तैसें कर्म लाइककै पुग्गल-समूह-भऱ्या,
लोकाकास भासमान सवतैं सुहाई है।
ऐसें लोकाकास माहिं आतमा जहाँ है तहाँ,
पुग्गल समूहरासि वनीही वनाई है।
यातैं जीवकर्म दोनौं एकमेक एकै ठौर,
जैनी जिनवानी जानि साची वात पाई है॥२०८॥

दोहा।

छहौं दरवकरि सरव नभ, व्यापक अति अवगाढ़।
परत्वभावकरि वढ़त नहिं, निज-सुभावकरि वाढ़॥

अथ अन्याकृतकर्मसंभूतिप्रकारः—गाथा ।

अत्ता कुणदि सहावं तत्थगदा पोग्गला सभावेहिं ।
गच्छंति कम्मभावं अण्णोण्णागाहमवगाढा ॥ ६५ ॥

दोहा ।

निज-सुभाव आतम करै, पुग्गल सहज सुभाव ।
करम-भावकरि परिनवै, एकै खेत रहाव ॥ ३१० ॥

सवैया इकतीसा ।

संसारी अवस्थामैं जीव चेतनाविहारी,
आदि अंत विना मोह-राग-दोष भरचा है ।
चीकनै असुद्धभाव जाहीसमै करै जीव,
ताहीसमै करता है लोकभाव धऱ्या है ॥
ताहीकौ निमित्त मानि जीव-परदेसविषै,
कर्मपुंज लगै गाढ़ एकभाव कऱ्या है ।
अपने सुभाव न्यारै एकभाव धारै लसै,
स्यादवाद-वानीहीतैं जीव लोक तऱ्या है ॥ ३११ ॥

दोहा ।

निहचैकरि जो देखिए, वस्तु सरव निजरूप ।
परसरूप-धारक नहीं, पै विवहार अनूप ॥ ३१२ ॥

अथानन्यकृतत्वं कर्मणां वैचित्र्यस्य—गाथा ।

जह पुग्गलदव्वाणं बहुप्पयारेहिं खंधणिव्वात्ति ।
अकदा परेहिं दिट्ठा तह कम्माणं वियाणाहि ॥ ६६ ॥

दोहा ।

जैसैं पुग्गल-दरवकै, सहजि वहुत परकार ।
तैसैं करमसमूह है, विना और करतार ॥ २१३ ॥

सवैया इकतीसा ।

जैसैं नभ माहिं चंद-सूरका निमित्त पाय,
नानाकाररूप होई अनू-दर्व पूरै है ।
कहूँ साँझ फूलै कहूँ वादर अनेकरूप,
इंद्रका धनुप परिवेप चंद-सूर है ॥
तैसैं कारमनपुंज लोकाकास माहिं भरैं,
करै काहू नाहिं सदा साहजीक नूर है ।
जीवका निमित्त पाय आठकर्मरूप होइ,
वस्तुका सुभाव और मानै सोइ कूर है ॥ २१४ ॥

दोहा ।

सोई वस्तु-सुभाव है, जो परभाव न लेइ ।
पर मिलाप यद्यपि लसै, तदपि आपरस देइ ॥ २१५ ॥

अथ निश्चयेन जीवकर्मणोश्चैककर्तृत्वेपि व्यवहारेण कर्मदत्त फलोपलंभो जीवस्य न विरुध्यते—गाथा ।

जीवा पुग्गलकाया अण्णोण्णागाढगहणपडिवद्धा ।
काले विजुज्जमाणा सुहदुक्खं दिंति भुंजंति ॥ ६७ ॥

दोहा ।

जीव और पुग्गल दुहू, आपसमैं मिलि एक ।
कालपाय विछुरै दुहू, दाता भुगता टेक ॥ २१६ ॥

सवैया इकतीसा ।

मोह-राग-दोष तीनौं जीवचिकनाई ए है,
नेह-रूछ-चिकनाई अनूकै अनूप है ।
बंधकी अवस्थामैं दौनौं मिलि एकमेक,
अवगाहकारी तातैं बंधै अंधकूप है ॥
थिति पूरी होत नासै भासै सुख-दुक्खरूप,
निच्चै विवहार देखै अनुका सरूप है ।
जीव निहचै सुभाव विवहारी विषै-भाव,
दौनौं भाव भोगी लसै जानै सोई भूप है ॥२१७॥

दोहा ।

कहत कहत इहुँ लगि कही, न्यारे जीव रु कर्म ।
निजसरूपकै भोगता, परसरूप नहिं धर्म ॥ २१८ ॥

अथ कर्तृत्वभोक्तृत्वव्याख्योपसंहारः—गाथा ।

तह्मा कम्मं कत्ता भावेण हि संजुदोध जीवस्स ।
भोत्ता दु हवदि जीवो चेदगभावेण कम्मफलं ॥ ६८ ॥

दोहा ।

कर्म करै निजभावकौं, जीव भावकौं सोइ
भुगता एकै जीव है, भाव करम-फल दोइ ॥ २१९ ॥

सवैया इकतीसा ।

जैसैं दर्वकर्म करै निहचैं सुभाव आप,
विवहारनय देखै परभाव-कर्त्ता है ।

जैसें जीव करै निजभावकौं निहचैरूप,
विवहारनय सोई परभाव-धर्त्ता है ।
जैसें दोनौं नयौंकरि जीव भोगता कहावै,
दुख-सुख-भाव और इष्टानिष्ट-भर्त्ता है ।
तैसें भोगी कर्म नाहिं चेतना अभाव तातैं,
ग्यानी ग्यान-भाव भावै रागदोष-हर्त्ता है ॥३२०॥

दोहा ।

सुख-दुख दीसै भोगता, सुख-दुखरूप न जीव ।
सुख-दुख जाननहार है, ग्यान-सुधारस पीव ॥ ३२१ ॥

अथ कर्म संयुक्तत्वमुख्यत्वेन प्रभुत्वगुणव्याख्यानं—गाथा ।

एवं कत्ता भोत्ता होज्झं अप्पा सगेहिं कम्मेहिं ।
हिंडति पारमपारं संसारं मोहसंछण्णो ॥ ६९ ॥

दोहा ।

ऐसें करता भोगता, आतम करम सुकीव ।
मोह-छन्न हींडै जगत, पार न लहै कदीव ॥ ३२२ ॥

सवैया इकतीसा ।

जगमैं अनादि जीव अपना विभाव करै,
ताहीका भुगता तातैं प्रभुसक्ति धारै है ।
विना आदि मोह लग्या तातैं विपरीत वग्या,
साची ग्यानजोति छाई मूढ़ता विथारै है ।
परका सहायलीना अपना विसार दीना,
नानाकाररूप कीना वाहिर निहारै है ।

इष्टविषै सुखी होइ दुखी है अनिष्ट माहिं,
मिथ्यादृष्टि अंध डोलै नेक न संभारे है ॥ ३२३ ॥

दोहा ।

संसारी संसारमैं, करनी करै असार ।
साररूप जानै नहीं, मिथ्यापनकौं टार ॥ ३२४ ॥

अथ कर्मविमुक्तमुख्यत्वेन प्रभुत्वगुणव्याख्यानं—गाथा ।

उवसंतखीणमोहो मग्गं जिणभासिदेण समुवगदो ।
णाणाणुमग्गचारी णिव्वाणपुरं वजदि धीरो ॥ ७० ॥

दोहा ।

सांत-खीनकरि मोहकौं, जिनसासनकौं जानि ।
ग्यानपंथ अनुगमनकरि, सिवपुर करि पहिचानि ॥३२५॥

सवैया इकतीसा ।

इहै जीव जाहीसमै जिनवानी-पंथ जानै,
सांत-खीन-मोही होइ मिथ्याहठ नासै है ।
सत्य ग्यान-ज्योति जागै कर्त्ताभोगतासा लागै,
सरवगरूप एक प्रभुता विलासै है ॥
ग्यानपंथ सूधा एक ताहीमैं गमन करै,
भमनैका भाव झारै सुद्ध परकासै है ।
केवल विमल एक सुद्ध सदाकाल रहै,
सोई जगवास नासि मोखपास वासै है ॥ ३२६ ॥

दोहा ।

मिथ्या-सम्यक-पंथमैं, जीव एक प्रभुरूप ।
करता भुगता आपमैं, परमैं पर जु अनूप ॥ ३२७ ॥

अथ जीवविकल्पाः कथ्यन्ते--

ऐको चेव महप्पा सो दुविप्पयपो त्रिलक्खणो होदि ।
चदु चंकमणो भणिदो पंचग्गगुणप्पधाणो य ॥ ७१ ॥
छक्कापक्कमजुत्तो उवउत्तो सत्तभंगसब्भावो ।
अट्ठासओ णवत्थो जीवो दसट्ठाणगो भणिदो ॥ ७२ ॥

दोहा ।

एक जीव दुय भेद है, त्रय लच्छिन गति चारि ।
पंच अग्रगुन जासमैं, षटकाय क्रम धारि ॥ ३२८ ॥
सपतभंग सद्भाव है, अष्टाश्रय नव भेद ।
दस-थानक गति देखिए, जीव-दरव निरभेद ॥ ३२९ ॥

सवैया इकतीसा ।

चेतनासरूप एक ग्यान द्रग उपयोग,—
दोइ भेद ज्ञान आदि चेतना त्रिभेद है ।
चारौं गतिरूप धरै पंच भाव भेद वरै,
विग्रह सक्रमैंरूप षोढ़ा गति भेद है ॥
अस्ति नास्ति आदि लसै सात अंग-वानी भेद,
आठ करम पद्धति पदारथ निवेद है ।
दस थान वरती है चेतन दरव एक,
जानै जिनवानीवाला वस्तु निरभेद है ॥ ३३० ॥

अथ बद्धस्य मुक्तस्य च गतिरुच्यते--गाथा ।

पयडिट्ठिदिअणुभागप्पदेसबंधेहिं सव्वदो मुक्को ।
उड्ढं गच्छदि सेसा विदिसावज्जं गदिं जंति ॥ ७३ ॥

दोहा ।

प्रकृति-थिती-अनुभागसौं, अरु प्रदेससौं बंध ।
मुकत-जीव ऊरध चलै, विदिसा विन गति अंध ॥३३१॥

सवैया इकतीसा ।

जगमैं अनादि जीव बंधन-विधान-बंध्या,
प्रकृति देसबंधौंकी योगतैं विलोकिए ।
थिति और अनुभाग होहिं है कषायसेती,
एई च्यारौं बंधभेद जीवभाव रोकिए ॥
भवतैं भवांतरकौं चलै च्यारौं दिसा ओर,
ऊरध अधो विभाग जहाँ जाकौं लोकिए ।
बंधनतैं मोख होय ऊरधकौं जाय सोई,
रज्वी-गति ग्रंथविषै सदाकाल धोकिए ॥ ३३२ ॥

दोहा ।

षटकायक्रम यहु कह्या, बद्धजीव गति-भेद ।
मुकत-जीव ऋजुगति कही, स्वाभाविक गत खेद ॥३३३॥

इति जीवास्तिकायव्याख्यानम् ।

अथ पुद्गलास्तिकायनिरूपणं--गाथा ।

खंधा य खंधदेसा खंधपदेसा य होंति परमाणू ।
इति ते चदुवियप्पा पुग्गलकाया मुणेयव्वा ॥ ७४ ॥

दोहा ।

खंध-खंधदेसी लसै खंधप्रदेस बखान ।
परमानू ए चारिविध, पुग्गल-दरव प्रमान ॥ ३३४॥

सवैया इकतीसा।

याही लोकविषै एक पुग्गल अनेकरूप,
खंध-परजायकरि काहू काल होई है।
खंधदेसरूप पर-जाय काहू काल होइ,
काहू काल खंधपरदेसरूप सोई है॥
काहू काल परमानू परजायरूप होइ,
चारौं भेद पुग्गलकै और नाहिं कोई है।
तातैं और भेद कोई पुग्गलका नाहिं कहा,
एक अंग सरवंग कहै मिथ्या जोई है॥ ३३५॥

दोहा।

जिनवानी जु अनेक है, एक कही नहिं जाय।
एक अनेक दुहूविषै, अनेकांत परजाय॥ ३३६॥

अथ पुद्गलद्रव्यविकल्पनिर्देशः—गाथा।

खंधं सयलसमत्थं तस्स दु अद्धं भणंति देसोत्ति।
अद्धंद्धं च पदेसो परमाणू चेव अविभागी॥ ७५॥

दोहा।

सकल वस्तुका खंध है, तिसका आधा देस।
चौथाई परदेस है, परमानू निरवेस॥ ३३७॥

सवैया इकतीसा।

पुग्गल अनंतानंत भेद-संथान-त्रसतैं,
भाग विना एक कोइ खंध नाम सार है

तामैं चारि भेद कहे खंध नाम सारा रूप,
ताका आधा देस नाम प्रगट विचार है ॥
आधा देस आधा होइ परदेस नामी सोइ,
अनू नाम अविभागी चौथा परकार है।
एई चारौं भेद एक पुग्गल अभेदरूप,
इनहींका जहाँ तहाँ जगमैं विथार है ॥ ३३८ ॥

दोहा।

जिनवानीमैं भेद बहु, कहवत अगम अपार।
सुलप-मतीकै कारनै, कहे चारि परकार ॥ ३३९ ॥

अथ स्कन्धानां पुद्गलव्यवहारसमर्थनं—गाथा।

बादरसुहमगदाणं खंधाणं पुग्गलोत्ति ववहारो।
ते होंति छप्पयारा तेल्लोकं जेहिं णिप्पण्णं ॥ ७६ ॥

दोहा।

बादर सूच्छिम खंध है, तिनका पुग्गल नाम।
छह प्रकार तिनकौं कहत, तीनलोक अभिराम ॥ ३४० ॥

सवैया इकतीसा।

रूप-रस-गंध-पर्स षटगुनी वृद्धि ह्रास,
पूरै-गलै-धर्म तातैं पुदगल विसेख है।
पुग्गल अनेक एक परजै अनन्य यातैं,
खंध परजाय नाम पुग्गल सलेख है ॥
तैसैं थूल सूच्छिम है पुग्गल-विभाव तामैं,
भेद षट तिनहींकै लोकरूप वेख है।

नानाकाररूप सृष्टि गोचर अगोचर है,
जानै जिनवानीवाला मूढ़कौं अलेख है ॥ ३४१ ॥

अथ तानेव षट्भेदानाह—गाथा।

पुढवी जलं च छाया चउरिंदियविसयकम्मपाओग्गा।
कम्मातीदा एवं छब्भेया पुग्गला होंति ॥ १ ॥

दोहा।

पृथिवी जल छाया विषै, चौरिंदिय अनिवार।
कर्मरूप परमानु सब, पुग्गल षट परकार ॥ १ ॥
थूल-थूल अस थूल है, थूलासूच्छिम धाम।
सूच्छिम-थूला सूच्छिमा, सूच्छिम-सूच्छिम नाम ॥ २ ॥

सवैया इकतीसा।

एकरूप छिन्न होइ जुरै फिर नाहिं आपैं,
काठ सिल आदि सोई थूल-थूल धऱ्या है।
छिन्न मिलि जावैं घीव दूध तोय तैल तातैं,
सोई थूल नाम पावै थूलताइ कऱ्या है॥
छाया तम धूप आदि थूलसूच्छिम अनादि,
सूच्छिमथूल चौरिंदी विषै भेद पऱ्या है।
कर्मवर्ग सूच्छिम है औ सूच्छिम-सूच्छिम है,
अनू नाम सारा लोक इनहीसौं भऱ्या है ॥ ३ ॥

दोहा।

छहौं भेद ए प्रगट है, पुग्गल-दरव सरूप।
सकल लोकमैं लसतु है, निज मरजाद अनूप ॥ ४ ॥

नोट-" पुढवी जलं च छाया " यह गाथा क्षेपक है । मूल ग्रन्थकी नहीं है ।

अथ परमाणुस्वरूपं—गाथा ।

सव्वेसिं खंधाणं जो अंतो तं वियाण परमाणू ।
सो सस्सदो असद्दो एक्को अविभागि मुत्तिभवो ॥ ७७ ॥

दोहा ।

सकल खंधका अंत जो, तिसहि कहत परमानु ।
नित्य सबद बिन एक है, मूरत भागलुकानु ॥३४२॥

सवैया इकतीसा ।

खंधरूप परजैका अंतभेद परमानू,
सोई है विभाग बिना तातैं अविभागी है ।
निर्विभाग एक परदेस तातैं एक लसै,
दर्वरूप नासै नाहिं सासुता विभागी है ॥
रूप आदि मूरतितैं मूरतीक नाम पावै,
भाषा परजाय तातैं भाषारूप त्यागी हैं ।
सुद्ध गुन-परजैसौं सदा सुद्ध परमानू,
सोई तौ प्रतीति आनै जाकै जोति जागी है ॥ ३४३ ॥

दोहा ।

अविभागी परमानु यहु, पुग्गल-दरव जथार्थ ।
खंधरूप नाना लसै, सो विभाव परमार्थ ॥ ३४४ ॥

अथ परमाणूनां जात्यन्तरत्वनिरासः—

गाथा ।

आदेसमत्तमुत्तो धादुचदुक्कस्स कारणं जो दु ।
सो णेओ परमाणू परिणामगुणो सयमसद्दो ॥ ७८ ॥

दोहा।

कथनमात्रकी मूर्त्ति है, भूमि—आदिका हेतु।
परमानू परिनाम गुन, निज असबद-गुन-हेतु ॥ ३४५ ॥

सवैया इकतीसा।

रूपादि गुनकौ और परमानू दरवकौ,
नाममात्र भेद लसै देसभेद नाहीं है।
मही तोय तेज वायु च्यारौंका कारनरूप
परमानू नाम तामैं चित्र परछांहीं है ॥
जैसैं तामैं गंध आदि विकत अविकत है,
तैसैंकै सब्दरूप नैक न दिखाहीं है।
एक परदेस अनू सबद है खंध-जन्य,
ऐसैं परमानु भेद जिनबानी माहीं है ॥ ३४६ ॥

दोहा।

परमानू पुग्गल-दरव, रहत जगत भरपूर।
पूरन-गलन-सुभावसौं, नानाविध अवचूर ॥ ३४७॥

अथ शब्दस्य पुद्गलस्कंधपर्यायत्वख्यापनं—गाथा।

सद्दो खंधप्पभवो खंधो परमाणुसंगसंघादो।
पुट्ठेसु तेसु जायदि सद्दो उप्पादगो णियदो ॥ ७९ ॥

दोहा।

सबद खंध-भव मानिए, अनु-समूहका खंध।
खंध-खंध मिलि घरपणा, उपजै सबद प्रबंध ॥३४८॥

सवैया इकतीसा ।

अपने सुभावकरि सब्दरूप वर्गनाकै,
  जहाँ तहाँ नभ माहिं अस्तिभाव रूढ़ै है ।
आतमा समीप लगै खंध सब्दरूप पुंज,
  काल पाय उदै होहिं धुनिभार गूढ़ै है ॥
उपादान धुनि खंध कारन वरग आन,
  धुनिकै वढ़ाउ तातैं नभ माहिं छूढ़ै है ।
यातैं सब्द परजाय कारनतैं होइ जाय,
  जथारूप जानै नाहिं मिथ्यामती मूढ़ै है ॥३४९॥

दोहा ।

एक सबद संजोगतैं, सबद-वरगना-पुंज ।
सबदरूप है परिनवै, जहँलगि पहुँचे गुंज ॥ ३५० ॥

अथ परमाणोरेकप्रदेशत्वख्यापनं—गाथा ।

णिच्चो णाणवकासो ण सावकासो पदेसदो भेत्ता ।
खंधाणं पिय कत्ता पविहत्ता काल संखाणं ॥ ८० ॥

चौपई ।

नित्य देइ अवकासकौं, अनवकास परदेस ।
खंध-विदारन करन फुनि, कालविभाग निवेस ३५१॥

सवैया इकतीसा ।

रूपादिगुनकी जातिरूप परदेस-अनू,
  सर्वदैव अविनासी तातैं नित्य मोलै है ।

रूपादि गुनकौं अवकास देइ दूजा अनू,
पैठै नाहिं अनूमैं अनवकास डोलै है ॥
खंधौंकौं विदारै और खंधौंकौ समारै सोइ,
कालका विभाग करै समयादि तोलै है।
द्रव्य खेत भाव संख्या ताहीतैं प्रगट होइ,
सोई परदेस नाम जिनवानी बोलै है ॥ ३५२ ॥

दोहा।

ताही एक प्रदेसकरि, संख्या सगरी जानि।
दरव खेत अरु कालकी, भाव-भेदकी मानि ॥३५३॥

चौपई।

खंधौंविषै लसैं परमानू, द्रव्यसंख्यका प्रगट बखानू।
तिसही एक प्रदेसहि माप्या, नभ अनंत खेत विधि थाप्या॥
सो प्रदेस अनु उलटनि पावै, समय काल संख्या प्रगटावै।
अनुमैं बरनादिक परिनमना, भाव संख्य ताकी परिगनना
इन च्यारौंमैं वस्तु विराजै, नानाभेद अनूमैं छाजै।
अनू प्रदेस जुदाई नाही, जुदा भाव कहवति परछाहीं॥३५६॥
तातैं अनु प्रदेसका कथना, सकल वस्तु संख्याका मथना।
जो प्रदेस यहु नाम न पावै, सकल वस्तु इक भिंड लखावै ३५७

दोहा।

जाकरि दरवहि देखिए, सो कहिए परदेश।
खेतरूप है वस्तुका, अलख निरंजन भेस ॥ ३५८ ॥

अथ परमाणौ गुणपर्यायनिरूपणं—गाथा।

एयरसवण्णगंधं दो फासं सद्दकारणमसद्दं।
खंधंतरिदं दव्वं परमाणुं तं वियाणेहि ॥ ८१ ॥

अडिल्ल।

एक वरन रस गंध फरस दुय विधि कहा।
सबदरूपका हेतु असबद सहजै लहा ॥
नाना खंधौंविषै अनंत दरव लसै।
परमानू सो जान जहाँ गुनक्रम वसै ॥ ३५९ ॥

सवैया इकतीसा।

रूप रस गंध फास परमानुविषै भास,
अनुगामी परिनाम गुनरूप गाये हैं।
एक रूप एक रस एक गंध फास दोइ,
क्रमरूप वरतना परजै कहाये हैं ॥
सबदरूप खंधौंतैं सबद उपजै सदा,
तातैं अनू एक देसी सब्द नाहिं भाये हैं।
स्निग्ध रूख गुन तासैं खंध नानारूप होई,
ऐसैं पुग्गलानु सदा लोकमैं दिखाये हैं ॥ ३६० ॥

चौपई।

पाँच वरनमैं एक वरन है, रस पाँचौंमैं एक धरन है।
गंध दोइ ईक गंध सुहाया, फरस आठ दुय फरस बताया ॥
स्निग्ध-रूच्छमैं एक कहावै, सीत-उष्णमैं एक रहावै।
ऐसैं अनुमैं परगट दीखैं, पाँच मुख्य गुन जिन सुन सीखैं ३६२

दोहा।

पनरह गुनकी गौनता, पाँच मुख्य गुन जान।
सुद्ध अनूमैं कहत है, सात असुद्ध वखान ॥ ३६३ ॥
आठ परस गुन जे कहे, तिनमैं लखिए च्यारि।
आपसमैं प्रतिपच्छ गति, सात असुद्ध निहारि (?) ॥

अथ सकलपुद्गलविकल्पोपसंहारः—गाथा।

उवभोज्जमिंदिएहिं य इंदियकाया मणो य कम्माणि।
जं हवादि मुत्तमण्णं तं सव्वं पुग्गलं जाणे ॥ ८२ ॥

दोहा।

इंदियकरि जो भोगिए, अरु जो इंदिय काय।
चित्त करम मूरत सबै, पुग्गल दरव दिखाय ॥ ३६५ ॥

सवैया इकतीसा।

इंद्रीके विषय फास रूप रस गंध भाष,
इंद्री वपु रसना औ नासा नैन कान है।
पाँच हैं सरीर नाम द्रव्यमन मनोधाम,
करम नोकरमकै परजैं प्रमान है ॥
अनुवर्ग वर्गना है द्वयनुतैं अनंत खंध,
मूरतीक नाना भेद पुग्गल निदान है।
जे जे दृष्टि गोचर हैं भूमि व्योमचारी सबै,
पुग्गलकै रूप ते ते ग्यानीके वखान हैं ॥ ३६६ ॥

दोहा।

वरनादिक जहाँ बीस गुन, सो मूरति परमान।
सो मूरति मूरति जहाँ, सो पुग्गल अभिधान ॥ ३६७ ॥
पुगल-दरव अनेक विधि, जगमैं लसै अनंत।
जथा सुमति उद्यम करै, कहत न पावै अंत ॥ ३६८ ॥

इति पुद्गलास्तिकायवर्णनम्।

अथ धर्मास्तिकायनिरूपणं—गाथा।

धम्मात्थिकायमरसं अवण्णगंधं असद्दमप्फासं।
लोगोगाढं पुट्ठं पिहुलमसंखादिय पदेसं ॥ ८३ ॥

दोहा।

अरस अवर्न अगंध है, सबद बिना विन फास।
लोकगाढ़ परसै पृथुल, धरम असंख प्रकास ॥ ३६९ ॥

सवैया इकतीसा।

वरनादिक गुन बीस तिनका अभाव जामैं,
सोही धर्मास्तिकाय अमूरति बखानी है।
याहीतैं असबद और सकल लोक व्यापी है,
लोक-अवगाही तातैं सारे जहाँ ताही है ॥
अयुत-सिद्ध सगरे प्रसिद्ध विसतारी औ,
संभ (?) है अपार तातैं लोकाकास माहीं है।
निहचै अखंड एक देसी विवहार माहीं,
असंख्यात परदेसी स्याद परछाहीं है ॥ ३७० ॥

दोहा।

धर्म-अस्तिकाया लसै, लोकाकास प्रमान।
एक अखंड अनादि है, अकृत अनंत अमान ॥ ३७१ ॥

अथ पुनरपि धर्मास्तिकायस्वरूपं विशेषतया निरूपयति—

गाथा।

अगुरुलघुगेहिं सयं तेहिं अणंतेहिं परिणदं णिच्चं।
गदिकिरियाजुत्ताणं कारणभूदं सयमकज्जं ॥ ८४ ॥

दोहा।

अगुरु-लघुक-गुन अनगनित, तिनकरि परिनत नित्त।
गतिकारन गतिवंतकौं, आप अकारज वित्त ॥ ३७२॥

सवैया इकतीसा।

दरवाहिंच्छेद (?) समै समै सोहै षट थान,
वृद्धिहानि............नानारूप सारा है।
....
....
उतपाद नास ध्रौव्य सत्ताका सरूप सारा,
गतिकौं सहायकारी कारण विथारा है।
अस्तिरूप वस्तु तामैं जगमैं अकारज है,
धर्म-दर्वरूप ऐसा पंडित विचारा है ॥ ३७३ ॥

दोहा।

गति-सहकारी गुन जहाँ, क्रियारहित परिनाम।
लोकाकास-प्रमान नित, धरमदरव अभिराम ॥ ३७४ ॥

अथ धर्मद्रव्यस्य गतिहेतुत्वे दृष्टान्तमाह—गाथा ।

उदयं जह मच्छाणं गमणाणुग्गहयरं हवदि लोए ।
तह जीवपुग्गलाणं धम्मं दव्वं वियाणेहि ॥ ८५ ॥

दोहा ।

जैसैं पानी मीनकौं, चलतैं करै सहाय ।
तैसैं पुग्गल जीवकौं, धरम-दरव गति दाय ॥ ३७५ ॥

सवैया इकतीसा ।

जैसैं जल चलै नाहिं मीनकौं चलावै नाहिं,
स्वयमेव चलै मीन ताका सहकारी है ।
तैसैं एक धर्मद्रव्य चलै न चलावै काहु,
पुग्गल जीव चलै तिनहीका सहारी है ॥
मीन गति-क्रियाचारी पानीका निमित्त पाय,
अविनाभाव दौनौंकै उदासीन भारी है ।
ऐसैं धर्मदर्व उदासीनरूप लोक मध्य,
जथारूप जैनी जानै वस्तुता सिरारी है ॥ ३७६ ॥

दोहा ।

जस नर-पसुकौं मही, चलनैकौं आधार ।
तैसैं पुग्गलजीवकौं, धरमद्रव्य सहकार ॥ ३७७ ॥

अथाधर्मास्तिकायस्वरूपाख्यानं—गाथा ।

जह हवदि धम्मदव्वं तह तं जाणेह दव्वमधमक्खं ।
ठिदिकिरियाजुत्ताणं कारणभूदं तु पुढवीव ॥ ८६ ॥

दोहा।

जैसा धरमदरव लसै, तैसा जान अधर्म।
थिति-किरिया कारन भला, पृथिवीवत जिनधर्म॥ ३७८॥

सवैया इकतीसा।

जैसा धर्मदर्व कहा अरस अरूप गंध,
सवद फास विना ही लोक अवगाही है।
सारा लोक-व्यापी विसतार लोकमान लसै,
असंख्यात परदेस एका निवाही है।
तैसाही अधर्मद्रव्य सगरे विसेषणसौं,
थिति-किरियावंतौंका कारन कहाही है।
पाचौं अस्तिकायविषै एक अस्तिकाय कहै,
यथारूप जानै मिथ्या-मोहिनी ढहाही है॥ ३७९॥

जैसा धर्मदर्व कहा तैसाही अधर्मदर्व,
इतना विसेष पर नीकै निहारेतैं।
गति-किरियावंतौंकों पानीवत कारन है,
धर्मदर्व जथारूप वस्तुता विचारेतैं॥
थिति-किरियावंतौंकौं पृथिवीवत कारन है,
सोई तौ अधर्मदर्व थितिकै समारेतैं।
पृथ्वी आप थानरूप अथकौं रहावै नाहिं,
उदासीन थिति-हेतु सम्यक उजारेतैं॥ ३८०॥

दोहा।

ज्यौं ग्रीषममैं पथिककौं, छाया सीतळ ठौर।
थितिकारन अधरम तथा, थितिकारक है और॥३८१॥

अथ धर्माधर्मसद्भावे हेतूपन्यासः—गाथा।

जादो अलोगलोगो जेसिं सब्भावदो य गमणठिदी।
दो विय मया विभत्ता अविभत्ता लोयमेत्ता य ॥ ८७ ॥

दोहा।

जिनतैं लोक अलोक है, गति थिति जिनतैं होय।
जुदे सदा मिलि एक फुनि, लोकमानतैं दोय॥३८२॥

सवैया इकतीसा।

जीवाजीव छहौं दर्व जामैं एक वृत्तिरूप,
सोई लोकाकासमान लोक माहिं लोक है।
तातैं धर्माधर्म दौनौं लोक-परमान कहै,
जीव पुदगल जातैं याहि माहिं रोक है॥
लोकतैं अलोक परैं परा है अनादिहीका,
सुद्धाकासरूप एक धर्माधर्मकौं कहै।
तातैं जो विभाग किया लोकालोक दौनैं रूप,
सो तौ धर्माधर्मतैं है जैनीवानी जो कहै॥ ३८३ ॥

चौपई।

धर्म अधर्म दरव ए दौनौं, लोक अलोक इनहिंकरि होनौं।
जीवादिक जु पदारथ नामी, जामैं सदाकाल विसरामी॥३८४॥

सोई लोकाकास कहावै, तातैं परै अलोक रहावै।
जामैं जीवादिक नहिं कोई, सुद्ध अकासरूप नभ होई॥३८५॥
अब सुनि पुग्गल जीव कहानी, इनमैं गति थिति किरिया मानी।
ताकै वाहिर कारन जानै, धर्म अधर्म दुहू परमानै॥ ३८६॥
जो कोइ धर्म अधर्महि खोवै, तो अलोक गति क्यों नहिं होवै।
तातैं लोकालोक वड़ाई, धर्म अधर्म देइ दिखराई॥ ३८७॥
औ फुनि धर्माधर्म विचारै, गुन-परजै अस्तित्व निरारै।
एक खेतकै दोनौं वासी, एकमेक निःक्रिय अविनासी॥३८८॥
पुग्गल जीव लोकमैं वरनै, क्रियावंत जित कित........।
धर्म अधर्म दोऊ सहकारी, तातैं लोकमात्र उपचारी॥ ३८९॥

दोहा।

लोकालोक अनादि नभ, एक अखंड अपार।
धर्म अधर्म अनादितैं, भया विभेद विचार॥ ३९०॥

अथ धर्माधर्मयोर्गतिस्थिति हेतुत्वेऽत्यन्तोदासीन्यवर्णनं—गाथा।
ण य गच्छदी धम्मत्थी गमणं ण करेदि अण्णदवियस्स।
हवदि गती सप्पसरो जीवाणं पुग्गलाणं च॥ ८८॥

दोहा।

आप धरम चलता नहीं, औरहिं कराहि न चाल।
पुग्गल-जीव-सुभावकै, गति विस्तरै त्रिकाल॥ ३९१॥

सवैया इकतीसा।

जैसैं वायु चलै आप धुजाकौ चलावै और,
तातैं धुजा हलनैका हेतु वायु कर्त्ता है।

तैसैं धर्म निःक्रिय है-कदाकाल चलै नाहिं,
सदा जीव-पुग्गलको गतिका न धर्त्ता है ॥
जैसैं तोय मछलीकौं आसरा सहाय करै,
तैसैं जीव अनू लौं धरमद्‌र्व भर्त्ता है।
आप तौ न चलै कबै परकै चलाइवेका,
बाहिर सहारा लसै राग-दोष हर्त्ता है ॥ ३९२ ॥
जैसैं गतिपूर्व थिति करै है तुरंग छिति,
थिति असवारकीका कर्त्ता अश्व हेतु है।
तैसैंकै अधर्मदर्व आप निःक्रिय सुभाव,
जीव-पुग्गलकी कबै थितिका न खतु है ॥
जैसैंकै पृथिवी आप रहै न रहावै काहू,
आपैं रहै अश्व ताकौं आसरा निकेतु है।
तैसैं जीव-पुग्गलकी थितिकौं सहाय करै,
सोई तौ अधर्मदर्व वस्तुतैं समेतु है ॥ ३९३ ॥

दोहा।

यातैं दौनौं दरव ए, लसै सदा असमान।
पुग्गल-जीव-क्रिया सधै, यहु उपचार वखान ॥३९४॥
आनमतीकै मति नहीं, मिथ्यामतकी दौर।
आपमती मतिमैं लखै, सम्यकमतकी ठौर ॥ ३९५ ॥

अथ धर्माधर्मयोर्गतिस्थितिहेतुत्वौदासीन्यविषये युक्तिमुपदर्शयति–

गाथा।

विज्जादि जेसिं गमणं ठाणं पुण तेसिमेव संभवदि।
ते सगपरिणामेहिं दु गमणं ठाणं च कुव्वंति। ८९ ॥

दोहा।

जिनकै गति थिति लसतु है, तिनकै गति थिति होइ।
जिनकौं निज परिनाम करि, गति थिति करता जोइ ३९६

सवैया इकतीसा।

धरमाधरम दौनौं जो तौ गति-थिति हेतु,
मुख्यरूप लसै तौ तौ बड़ाई विरोध है।
गतिकौं करैया सदाकाल गतिहीकौं करै,
थितिका करैया थिति ऐसा तौ न वोध है॥
तातैं चलै और रहै जीव अनू नाना ठौर,
आपैं उपादान सेती निहचैकौं सोध है।
बाहिर निमित्त धर्मा-धर्म उदासीनरूप,
ऐसैं भेद वानीहीतैं ग्यानीकै प्रबोध है॥ ३९७॥

दोहा।

धर्माधर्म सरूपकौं, दिया सकल प्रगटाय।
कुंदकुंद मुनिराजने, भविजन हित उपजाय॥ ३९८॥
जे दरसन-दरसी भये, ते दरसैं दरसाव।
जे दरसन दरसैं नहीं, ते विपरीत लखाव॥ ३९९॥

इति धर्माधर्मास्तिकायस्वरूपम्।

अथ आकाशास्तिकायस्वरूपं--गाथा।

सव्वेसिं जीवाणं सेसाणं तह य पुग्गलाणं च।
जं देदि विवरमखिलं तं लोए हवदि आयासं॥ ९०॥

दोहा ।

जीव सरव पुग्गल धरम, अधरम काल निवास ।
देइ सकल अवकासकौं, सो है दरव अकास ॥ ४०० ॥

सवैया इकतीसा ।

लोकविषै जहाँ जहाँ जीव पुग्गल-समूह,
धर्माधर्म काल व्योम सबका निवास है ।
सबहीकौं सदाकाल एक खेतविषै ढाल,
अवकास व्योम देय कारन विलास है ॥
सुद्ध परदेस खेत सबका सहेत गुन,
परजै समेत सदा सुद्धता प्रकास है ।
हलनचलनवर्ती क्रिया जामैं कबै नाहिं,
सुद्ध अवकास-क्रिया जामैं सो अकास है ॥ ४०१ ॥

दोहा ।

यहु सरूप वरनन किया, सब अकासका जानि ।
अव विसेष वरनन कछू, कहत सुनौ धरि ध्यान ॥ ४०२ ॥

अथ लोकाद्बहिराकाशसूचना— गाथा ।

जीवा पुग्गलकाया धम्माधम्मा य लोगदोगण्णा ।
तत्तो अणण्णमण्णं आयासं अंतवदिरित्तं ॥ ९१ ॥

दोहा ।

पुग्गलकाया जीव फुनि, धरमाधरम अनन्य ।
तिनतैं अन्य अनन्य है, नभ अनंत अनगन्य ॥ ४०३ ॥

जीव है असंख परदेसी एक लोकमान,
पुग्गल अनंत सो भी लोक-परिमित है ।

धरमाधरम दौना असंख परदेसी है,
औ असंख अनू-काल लोक माहीं थित है ॥
तातैं ए दरव न्यारे लोक माहिं परे सारे,
इनतैं अनन्य लोक किया नाहीं नित हैं।
तातैं परे है अनंत एक नभ सुद्धवंत
अन्यभाव तामैं वसै ज्ञानीकै उदित है ॥ ४०४ ॥

दोहा।

लोकथकी वाहिर परा, सकल अलोकाकास।
अगम अपार अनंत है निज गुन-परजै-वास ॥ ४०५ ॥

अथाकाशस्यावकाशैकहेतोर्गतिस्थितिहेतुत्वशङ्कायां दोषोपन्यासः-

गाथा।

आगासं अवगासं गमणट्ठिदिकारणेहिं देदि जदि।
उड्ढं गदिप्पधाणा सिद्धा चिट्ठंति किध तत्थ ॥ ९२ ॥

दोहा।

ज्यौं अवकास अकास-गुन, त्यौं जग गतिथिति होइ।
सिद्ध ऊर्द्धगति सहजतैं, सिवमैं रहै न कोइ ॥ ४०६ ॥

सवैया इकतीसा।

जैसैं आकास दरव जीव और पुग्गलकौं,
अवकास देनवाला सदाकाल हत है
तैसैं जीव पुग्गलकै चलने रहनेकौं भी,
करता अकास जौ पै कारन महत है

तौ पै कहौ कैसैं रहै ऊरध सुभाव-गत,
सिद्ध सिद्धआलेविषै आगै क्यों न गत है।
नभ तौ सहायकारी आतमा विहारधारी;
सारी बात विभचारी श्रीजिनेस मत है ॥ ४०७ ॥

दोहा ।

जैसैं सब आकासमैं, गुन अवकास अखंड ।
गति-थिति-कारन है नहीं, वस्तुरूप बल चंड ॥ ४०८ ॥

अथ लोकशिखरे सिद्धानां स्थितिमाह—गाथा ।

जह्मा उवरिट्ठाणं सिद्धाणं जिणवरेहिं पण्णत्तं ।
तह्मा गमणट्ठाणं आयासे जाण णत्थित्ति ॥ ९३ ॥

दोहा ।

जो सिद्धालै सिद्ध हैं, और कहूँ नहिं जाहिं ।
तो गतिथिति आकास-गुन, निहचै जानौं नाहिं ॥४०९॥

सवैया इकतीसा ।

जातैं कर्मनास भये ऊरध सुभावसेती,
सिद्धजीव जाय जाय सिद्ध-गति-वासी है ।
सदाकाल रहै तामैं और ठौर नाहीं भामै,
निर्विभाग सुद्ध एक जोति परगासी है ॥
तातैं ऐसा निहचैसौं जानिए प्रसिद्ध नभ,
चालै राखै नाहिं काहू अवकास रासी है ।
गति-थानकौं निमित्त धर्माधर्म दौनौं लसै,
वस्तुसीमा जैसी तैसी साची दृष्टि भासी है ॥४१० ॥

दोहा।

जामैं जैसा गुन कहा, तामैं तैसा होइ।
और नाहिं गुन औरका, वस्तु न साधै कोइ॥४११॥

अथाकाशस्य गतिस्थितिहेतुत्वाभावकारणं दर्शयति—गाथा।
जदि हवदि गमणहेदू आकासं ठाणकारणं तेसिं।
पसजदि अलोगहाणी लोगस्स य अंतपरिवुड्ढी॥ ९४॥

दोहा।

गमन-थानका हेतु जो, होइ अकास महंत।
तो अलोककी हानि है, लोक वढै विन अंत॥४१२॥

सवैया इकतीसा।

नहिं है अकास गति-थानका निमित्त यातैं,
लोकालोक सीमा नीकी सदाकाल वनी है।
जो तो गति-थान-हेतु कहिए आकास दर्व,
तो तो है विरोध वड़ा सीमा सारी भनी है॥
नभ तौ अपार सारै गति-थानकौं निवारै,
कौन है अलोक सीमा लोकरूढ़ि हनी है॥
छहौं दर्व पावै जहाँ तहाँ लोक-सीमा नाहिं,
भेदग्यान जाहि सवै साची वात मनी है॥४१३॥

दोहा।

यातैं गतिथिति-हेतुका, नभमैं बसै अभाव।
एक सुद्ध अवकास गुन, सदा विसेष लखाव॥४१४॥

अथाकाशस्य गतिस्थितिहेतुत्वनिरासोपसंहारः—गाथा।

तह्मा धम्माधम्मा गमणट्ठिदिकारणाणि णागासं।
इदि जिणवरेहिं भणिदं लोगसहावं सुणंताणं ॥ ९५ ॥

दोहा।

तातैं धर्म अधर्म है, गति-थिति-कारनवंत।
नहिं अकास जिनकथन यौं, ग्यानी लखै लसंत॥ ४१५॥

सवैया इकतीसा।

धर्मदर्वविषै नीका गति-हेतु वन्या ठीका,
सबतैं विशेष साधै धर्म माहिं गानिए।
ऐसैं ही अधर्म माहिं थान सहकारी गुन,
सबसौं निरारा करै लोक माहिं भानिए॥
यातैं गति-थान-हेतु नभकौ न खेतु सो है,
एक अवकाश तामैं देसदेस चानिए।
ऐसा उपदेस जिनराजकै समाजविषै,
जथाभेद जानैसेती मिथ्यामोह हानिए॥ ४१६॥

दोहा।

धर्म-अधर्मविषै लसै, गति-थिति-हेतु कहान।
और दर्वका गुन नहीं, यहु जिनकथन प्रवान॥४१७॥

अथ धर्माधर्मलोकाकाशानामवगाहवशादेकत्वे पि वस्तुत्वेनान्यत्वं प्रतिपादयति—गाथा।

धम्माधम्मागासा अपुधब्भूदा समाणपरिमाणा।
पुधगुवलद्धिविसेसा करंति एगत्तमण्णत्तं॥ ९६॥

दोहा ।

धर्म अधर्म अकास फुनि, अपृथकभूत समान ।
न्यारे लसैं विसेषसौं, एक अन्य असमान ॥ ४१८ ॥

सवैया इकतीसा ।

धर्माधर्म लोकाकास तीनौं ए समान देस,
एकखेतवासी तातैं एकभाव भजै हैं ।
ऐसा विवहार असद्भूत-नय लखाव,–
ग्याता जीव लखि जानैं मिथ्यामती लजै हैं ॥
गति-थान-अवगाह-हेतुरूप भिन्न देस,
इतनं विसेषसेती न्यारे तीनौं रजै हैं ।
निहचै सरूप ऐसा अनुभौ विलास तैसा,
ग्यानी ग्यानभाव जानै ग्येयसंग तजै हैं ॥ ४१९ ॥

दोहा ।

एक ठौर तीनौं रहैं, तातैं एक रहाव ।
वस्तुरूपकरि भिन्न हैं, सोई भिन्न जताव ॥ ४२० ॥
कथन कथनका मथनकरि, पाया कथन कहान ।
कथन कथन न्यारा लसै, मथन मथन रसग्यान ॥ ४२१ ॥
यहु अकास वरनन किया, कुंदकुंद मुनिराज ।
जथासरूप विचारतैं, प्रगटै आतम-काज ॥ ४२२ ॥

इत्याकाशास्तिकायवर्णनम् ।

अथ चूलिका ।

अथ द्रव्याणां मूर्तामूर्तत्वं चेतनाचेतनत्वं च निरूपयति—गाथा ।

आगासकालजीवा धम्मा धम्मा य मुत्तिपरिहीणा ।
मुत्तं पुग्गलदव्वं जीवो खलु चेदणो तेसु ॥ ९७ ॥

दोहा ।

व्योम काल आतम धरम, अधरम मूरति-हीन ।
पुग्गल मूरतिवंत है, जीव चेतना-लीन ॥ ४२३ ॥

सवैया इकतीसा ।

रूप-रस गंध फास च्यारौं भेद मूरतिकै,
इतने अभावसौं अमूरतीक कहिए ।
नभ काल जीव-सुद्ध धर्म औ अधर्म पाँचौं,
मूरति विनाही द्रव्यसीमा भेद गहिएं ॥
पुग्गलसरूप अनू एक मूरतीक कहा,

....

....

जथाभेद जानैहीतैं अंत विना रहिए ॥ ४२४ ॥

दोहा ।

जो विसेष वरनन लसै, विखरा सव परचूर ।
सो कहवतमैं चूलिका, वस्तुरूप रसपूर ॥ ४२५ ॥

अथ सक्रियानिष्क्रियत्वमुपदर्शयति—गाथा ।

जीवापुग्गलकाया सह सक्किरिया हवंति ण य सेसा ।
पुग्गलकरणा जीवा खंधा खलु कालकरणा दु ॥ ९८ ॥

दोहा।

पुग्गलकाया जीव फुनि, ए सक्रिय नहिं सेख।
पुग्गलकारन जीव है, काल-करन अनु देख॥ ४२६॥

सवैया इकतीसा।

परदेससेती और परदेसविषै जाना,
परजायरूप क्रिया ग्रंथनिमैं भाखी है
कर्मरूप पुग्गलका बाहिर निमित्त पाय,
जीव क्रियावंत बिना कर्म क्रिया नाखी है॥
बाहिर निमित्त परिनाम निमित्तकारी काल,
तातैं पुग्गलानु क्रियावंत सदा राखी है॥
च्यारौं बाकी रहै द्रव्य निक्रिय सुभाव ते हैं,
ग्यानी यथा-रूप जानै जिनराज साखी है॥४२७॥

दोहा।

जे परदेस अडोल नित, ते निक्रिय पहिचान।
जिनकै हलन चलन लसै, ते हैं किरियावान॥४२८॥

अथ मूर्त्तामूर्त्तनिरूपणं—गाथा।

जे खलु इंदियगेज्झा विसया जीवेहिं हुंति ते मुत्ता।
सेसं हवदि अमुत्तं चित्तं उभयं समादियदि॥ ९९॥

दोहा।

जिनकौं इंद्रिय गहि सकैं, ते हैं मूरतिवंत।
और अमूरत अरथ है, चित्त उभय विकसंत॥४२९॥

सवैया इकतीसा ।

रसना परस घ्रान चच्छु कान इंद्री जान,
इन जोगि विषै हैं ते मूरत वखानै हैं ।
सेष अरथ पाँचौंमैं वरनादि गुन नाहिं,
तातैं एक मूरतीक ग्रंथनिमैं जानै हैं, ॥
मनसा विचार जोगि मूरत अमूरत है,
श्रुतग्यान-साधनतैं अर्थपुंज मानै हैं ।
ऐसा जिनराजवानीका है विसतार सारा,
आप पर न्यारा जानि मिथ्याभाव भानै हैं॥४३०॥

दोहा ।

यहु विसेष वरनन किया, सवै चूलिका माहिं ।
सुमतमतीकै प्रगट है, कुमतमतीकै नाहिं ॥ ४३१ ॥

इति चूलिका समाप्ता।

अथ कालद्रव्यस्वरूपं निरूपयति—गाथा ।

कालो परिणामभवो परिणामो दव्वकालसंभूदो ।
दोण्हं एस सहावो कालो खणभंगुरो णियदो ॥ १०० ॥

दोहा ।

काल होइ परिनामतैं, कालानू परिनाम ।
दौनौंविषै सुभाव यहु, काल छिनक विसराम॥४३२॥

सवैया इकतीसा ।

क्रमपाती समयका विवहार-काल नाम,
ताका आधार निहचै काल नाम नामी है ।

पुग्गल जीव दौनौंकै होइ परिनामसेती,
विवहारकाल नाम समैं परिनामी है॥
सोई परिनाम सदा सर्वकाल वर्तनातैं,
सुद्ध कालरूप लसै निहचैका गामी है।
यातैं विवहारकाल परिनामरूप सोई,
परिनाम कारजतैं दर्व अभिरामी है॥ ४३३ ॥

दोहा ।

छिनभंगुर विवहारतैं, सूच्छिम परजय मान।
निहचैकाल अचल सदा, गुन-परिजाय निधान ४३४
समैं काल विवहार है, निहचै काल सरूप।
दौनौंका बरनन कह्या, जथाथान अनुरूप॥ ४३५ ॥

अथ नित्यक्षणिकत्वेन कालविभागः—गाथा ।

कालोत्ति य ववदेसो सब्भावपरूवगो हवदि णिच्चो ।
उप्पण्णप्पद्धंसी अवरो दीहंतरट्ठाई ॥ १०१ ॥

दोहा ।

काल नाम इतना कथन, अस्ति प्ररूपक नित्य।
उपजै विनसै दीर्घथिति, परजै-काल अनित्य ॥४३६॥

सवैया इकतीसा ।

काल इन दोइ आँक मध्यवाची अरथमैं,
निहचै सरूप जानो नित्य काल चित है।
उतपन्न होइ नासै द्रव्यका विषै भासै,
समय नाम पर्याय-काल सो अनित्य है॥

सोई काल छिनभंगी संतति नय अंगी है,
दीर्घलौं सथाइ-पल्य सागर उदित है।
निहचै है काल नित्य द्रव्यरूप मित तातैं,
विवहार छिन साधै सोई समाचित है ॥ ४३७ ॥

दोहा।

अपने सहज सुभावसौं, रहै सुनिहचै होइ।
परकी छाया जहँ परै, तहँ विवहार विलोइ ॥ ४३८ ॥

अथ कालद्रव्यस्यास्तिकायनिषेधः—गाथा।

एदे कालागासा धम्माधम्मा य पुग्गला जीवा।
लब्भंति दव्वसण्णं कालस्स दु णात्थि कायत्तं ॥ १०२ ॥

दोहा।

काल व्योम धरमाधरम, पुग्गल जीव कहान।
दरव नाम पावै सबै, काल हि काय न जान॥४३९॥

सवैया इकतीसा।

जैसैं जीव पुग्गल औ धर्माधर्म व्योम नाम,
दर्व-भेद लच्छिनतैं दर्वरूप ढलै है।
तैसैं काल मिलै छहौं दर्व नाम ए विसेष,
काल विना काय अनू लोक माहिं रलै है ॥
यातैं पंच अस्तिकायविषै मुख्य काल नाहिं,
परिनाम परजैतैं काल-अनू भलै है।
ऐसैं छहौं दर्वहीतैं आतमा-सरूप न्यारा,
जथारूप जानैसेती मिथ्यामोह गलै है ॥ ४४० ॥

दोहा ।

छहौं दरवकै लोकमैं, रोक न सकई कोइ ।
जथासरूप विलोकतैं, थोकसहित गुन दोइ ॥ ४४१ ॥

इति कालद्रव्यवर्णनम् ।

अथ तदवबोधफलपुरस्सरः पंचास्तिकायव्याख्योपसंहारः—

गाथा ।

एवं पवयणसारं पंचत्थियसंगहं वियाणित्ता ।
जो मुयदि रागदोसे सो गाहदि दुक्खपरिमोक्खं ॥ १०३ ॥

दोहा ।

ऐसैं प्रवचनसारमैं, अस्तिकायकौं जानि ।
राग-दोपकौं छाँडिकरि, गाहौ दुख-परिहानि ॥४४२॥

सवैया इकतीसा ।

कालयुत पंचअस्ति-काय विना और कछू,
कहैं नाहिं जैन तातैं अस्तिकाय सार है ।
तामैं वस्तुरूप सुद्ध जीव अस्तिकाय बुद्ध,
परकै संजोगसेती सगरा विकार है ॥
ऐसैंही विवेक-जोति-जगै राग-दोप-मोह,-
भगै परभावसेती वंधन विडार है ।
आकुलता दुःख डारि जथारूप धारि धारि,
भेदग्यानी मोख पावै आगम अपार है ॥ ४४३ ॥

दोहा ।

जीवभावकी अलटतैं, अलट परी सब ठौर ।
जब अलटनि सुलटी परी, तब अलटनि नहिं और ॥ ४४४

षट् दरवातम ग्येय सब, ग्यानविषै विलसंत ।
ग्येयरूप सौ ग्येय है, ग्याताग्यान महंत ॥ ४४५ ॥

अथ दुःखविमोक्षकरणक्रमं दर्शयति—गाथा ।

मुणिऊण एतदट्ठं तदणुगमणुज्झदो णिहदमोहो ।
पसमिय रागद्दोसो हवादि हदपरावरो जीवो ॥ १०४ ॥

दोहा ।

ग्रंथ-अरथकौं जानि करि, तिस अनुगत हत-मोह ।
रागदोष परसमित ह्वै, निहत बंध-संदोह ॥ ४४६ ॥

सवैया इकतीसा ।

याही ग्रंथविषै अर्थ जीव चेतना-सुभाव,
ताकै जानिवैका कोऊ उद्यम धरतु है ।
तबहीतैं दृष्टि मोह छीन होता जाइ ताका,
निजरूप जानै ग्यान-जोति उछरतु है ॥
राग-दोष सांत होइ पूरव निबंध खोइ,
नवा बंधका अभाव ग्यान निवरतु है ।
आपविषै लीन होइ परका वियोग जोइ,
सुद्ध चेतना-सुभाव आपमैं भरतु है ॥ ४४७ ॥

दोहा ।

अस्तिकायकै कथनमैं, सगरे यहु फल देख ।
ग्यानरूप चेतन लसै, ग्येयरूप, परवेप ॥ ४४८ ॥

सोरठा ।

छहौं दरबका रूप, समय कथनमैं कथन है ।
अनुभौ हेतु अनूप, पंचअस्तिकाया सहित ॥ ४४९ ॥

इति समयव्याख्यायामन्तर्नीतषड्द्रव्यपञ्चास्तिकायवर्णनात्मकः
प्रथमः श्रुतस्कन्दः समाप्तः ।

श्रीवीतरागाय नमः

अडिल्ल।

वस्तु तत्वका भेद जथावत सब कहा।
अस्तिकाय अरु दरव कथनकरि लहलहा॥
सकल पदारथरूप जहाँ अवतार है।
सो मारग अब सुनहु सुमति दातार है॥ १॥

अथाप्रस्तुतिपुरस्सर प्रतिज्ञा—गाथा।

अभिवंदिऊण सिरसा अपुणब्भवकारणं महावीरं।
तेसिं पयत्थभंगं मग्गं मोक्खस्स वोच्छामि॥ १॥

दोहा।

महावीरकौं नमन करि, कहौं पदारथ भंग।
मोख सुगम मारग लसै, अपुनर्भव परसंग॥ २॥

सवैया इकतीसा।

वर्तमान धर्मतीर्थ ताका करतार कहा,
वर्द्धमानस्वामी ताकौं सिरसा नमन है।
ऐसी भावथुति सिद्ध-गतिका निमित्त जानि,
हियै उपादेय मानि सुद्धता रमन है॥
तातैं जे पदारथ हैं मोखपंथ हेतु कहे,
तिनहींकौं जानवेका उद्यम गमन है।

ऐसी मुनिराज-चाल आप काजविषै लसै,
  ताकी सुद्ध भावनातैं मोहका वमन है ॥ ३ ॥

दोहा ।

जे आपन-पदकौं नमैं, ते आपतैं प्रधान ।
सुद्ध भावकै भावतैं, सुद्ध भाव निरवान ॥ ४ ॥

अथ संक्षेपेण मोक्षमार्गं निरूपयति—गाथा ।

सम्मत्तणाणजुत्तं चारित्तं रागदोसपरिहीणं ।
मोक्खस्स हवदि मग्गो भव्वाणं लद्धबुद्धीणं ॥ २ ॥

दोहा ।

जो चरित समकितसहित, रागदोष-परिहीन ।
सो चारित सिवपंथ है, भवि-आतम-आधीन ॥ ५ ॥

सवैया इकतीसा ।

सम्यक सरूप-दृष्टि ज्ञानयुत होइ दृष्टि,
  चारित यथासरूप मोख-पंथ साचा है ।
राग-दोष-मोह-परनाली मूलहीतैं जाय,
  निर्विकार चिदानंद आपहीमें राचा है ॥
ऐसा परिनाम भव्य आतमा प्रगट होय,
  खोय मिथ्यामेल सारा सुद्ध भाव जाचा है ।
ऐसैं निजरूप पावै मोखकौं सिधावै जीव,
  और भांति जानैहीतैं लोकनाच नाचा है ॥ ६ ॥

दोहा ।

दरसन ग्यान चरन कहे, सिव-मारग विवहार ।
एकरूप चेतन लसै, निहचै मोख-विहार ॥ ७ ॥

राग-दोषकी घटनितैं, घटै सकल परभाव ।
आप-भावकी बढ़नितैं, आपैं आप बढ़ाव ॥ ८ ॥

अथ व्यवहार सम्यग्दर्शनस्वरूपं ग्रन्थान्तरे--गाथा ।

एवं जिणपण्णत्ते सद्दहमाणस्स भावदो भावे ।
पुरिसस्साभिणिबोधे दंसणसद्दो हवदि जुत्तो ॥ १ ॥

दोहा ।

ऐसैं जिनपरनीतमैं, तत्वरूप सरधान ;
मति-श्रुतिकरि आतमविषै, सो दरसन परधान ॥ १ ॥

सवैया तेईसा ।

जीव अजीव समस्त पदारथ, सारथरूप जिनेस वखानै ।
जानै जिनौं निजरूपविषै, नित आतमतैं परमातम सानै ॥
सम्यकदृष्टि सरूप तेई पर,-भाव विदारक लोक प्रवानै ॥
मुख्य तेई समदृष्टि कहे, विवहार वखान विषै सब जानै ॥ २ ॥

दोहा ।

सकल पदारथमैं अरथ, आपरूप अवधारि ।
निरविकलपमैं लीन है, सम्यकदृष्टि निहारि ॥ ३ ॥

नोट--यह गाथा क्षेपक है ।

अथ सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रस्वरूपं निरूपयति--गाथा ।

सम्मत्तं सद्दहणं भावाणं तेसिमधिगमो णाणं ।
चारित्तं समभावो विसयेसु विरूढमग्गाणं ॥ ३ ॥

दोहा ।

समकित श्रद्धा भावकी, तिनही अधिगम ग्यान ।
चारित समभावन कहा, विषय-वियोग-निदान ॥ ९ ॥

सवैया इकतीसा ।

नव तत्वविषै आप-पररूप रूपी श्रद्धा,
आप लीक उपादेय सम्यकदरस है ।
तिनहींमैं संसै मोह विभ्रम विनास होतैं,
आप-पर-ज्ञानपना ग्यानका परस है ॥
पररूप परसंग झारि आपविषै लीन,
चंचलता-भाव-हीन चारित अरस है ।
एई तीन भेद मोख-मारग जिनेस कहे,
विवहार निहचैसौं आतम सरस है ॥ १० ॥

दोहा ।

एही तीनौं गुन कहे, आतम-दरव विसेष ।
इनकै लखतैं लखतु है, आतम-दरव अलेख ॥ ११ ॥

अडिल्ल ।

इह त्रयलच्छिन कथन मोख-मारग लसै ।
निहचै अरु विवहार कथन आगैं बसै ॥
सम्यकदरसन-ग्यान-विषय नव पद कहै ।
इनकै कथने हेतु इहाँ सूचन रहै ॥ १२ ॥

अथ पदार्थानां नामनिर्देशः--गाथा ।

जीवाजीवा भावा पुण्णं पावं च आसवं तेसिं ।
संवरणिज्जरबंधो मोक्खो य हवंति ते अट्ठा ॥ ४ ॥

दोहा ।

जीव अजीव रु पुण्य है, पाप आसरव होइ ।
संवर निर्जर बंध है, मोख पदारथ जोइ ॥ १३ ॥

सवैया इकतीसा ।

चेतना-सुभाव जीव चेतना अभाव जामैं,-
सो अजीव पंच भेद श्रीजिनेस भाखा है ।
जीवकै विसुद्धभाव कर्म-पुग्गलानु पुण्य,
संकलेस कर्म पापदर्व भाव साखा है ॥
कर्मद्वार आस्रव औ द्वार-रोध संवर है,
एकदेस कर्मनास निर्जराभिलाखा है ।
जीव कर्म एकमेक बंध सर्व कर्म-नास,
मोखका सरूप ग्यानी आप माहिं चाखा है॥१४॥

दोहा ।

जीव अजीव जुदे सदा, वस्तुरूप भगवान ।
दौनौंकै संजोगमैं, सात पदारथ आन ॥ १५ ॥
दर्व भाव दुय भेद है, नवौं पदारथ माहिं ।
दरव भेद पुग्गलविषै, भाव जीव परछाहिं ॥ १६ ॥
नवौं पदारथमैं अरथ, जीव पदारथ माहिं ।
दरव भेद पुग्गलविषै, भाव जीव परछाहिं ॥ १७॥
नवौं पदारथमैं अरथ, जीव पदारथ एक ।
स्वारथ-पद पद अरथमैं, पदपद अरथ अनेक ॥ १८ ॥

अथ जीवस्वरूपोपदेशः--गाथा ।

जीवा संसारत्था णिव्वादा चेदणप्पगा दुविहा ।
उवओगलक्खणा वि य देहादेहप्पवीचारा ॥ ५ ॥

दोहा ।

संसारी अरु सिद्ध है, चेतनतागुन खानि ।
उपयोगी देही अतनु, जीव-सरूप पिछानि ॥ १९ ॥

सवैया इकतीसा ।

संसारी अवस्था माहिं जीव है असुद्धरूप,
सुद्धरूप मुक्त कहे कर्मपुंज जारेतैं ।
चेतना-सुभाव दौनौं सबतैं विसेष हौनौ,
चेतनाकै परिनाम उपयोग धारेतैं ॥
संसारी सदेह नाना मुक्तकौं अदेह जान,
असंख्याती परदेस एक एक न्यारेतैं ।
किये न करायें काहू गुनकै उमाहू सदा,
वस्तुरूप जीवपुंज जगमैं विचारेतैं ॥ २० ॥

दोहा ।

जाननहारा जीव है, जानै जीव अजीव ।
जो जानै जाननपना, तौ जानता सुकीव ॥ २१ ॥
काल अनादि अनादितैं, वादि गँवाया वादि ।
आदिरूप जाना नहीं, परजै गमन अनादि ॥ २२ ॥

अथ पृथिवीकायादिपञ्च-स्थावराणां भेदाः—गाथा ।

पुढवी य उदगमगणी वाउवणप्फदिजीवसंसिदा काया ।
देंति खलु मोहबहुलं फासं बहुगा वि ते तेसिं ॥ ६ ॥

दोहा ।

पृथिवी उदक अगनि पवन, हरित जीव-जुत काय ।
मोह बहुल इंद्रिय परस, बहुविध जीव-निकाय ॥२३॥

सवैया इकतीसा।

मही तोय तेज वायु औ वनासपती काय,
पुग्गलकै परिनाम नानारूप खंध है।
थावरनाम करमउदै आयेसेती जीव,
नानारूप देहधारी चेतना-प्रबंध है॥
ऐसेंकै अनंत जीव पाचौं कायमैं सदीव,
एकइंद्री विपै वेदै मोहरूप अंध है।
ऐसै जीव भेदसेती जीवभेद जान्या नाहिं,
सारै जग डोलै मिथ्यामती अंधधंध है॥ २४॥

दोहा।

मिथ्यामत मिथ्यामती, मिथ्यामतकी चाल।
मिथ्या अलट परी वड़ी, तातैं मिथ्या हाल॥ २५॥
करम-चेतना फल जहाँ, मोह-वहुलता भार।
थावरपनमैं जीवकौं, नैक न पर संसार॥ २६॥

अथ पृथिवीकायिकादीनां पञ्चामेकेन्द्रियत्वख्यापनं—

गाथा।

ति-स्थावरतणुजोगा अणिलाणलकाइया य तेसु तसा।
मणपरिणामविरहिदा जीवा एइंदिया णेया॥ ७॥

दोहा।

तीनौं थावरकाय है, आग-वायु-त्रसरूप।
मन-परिनाम-रहित सदा, एकेन्द्रिया अरूप॥२७॥

सवैया इकतीसा ।

पृथिवी तोय हरीकाय तीनौं नामकर्म लसैं,
कायकै संजोगसेती थावर कहावै है ।
आग वायु थावर है यद्यपि तथापि दोनौं,
चलनकै जोगसेती त्रसता लहावै है ॥
मनसा बिना ही एक इंद्रिय सरूप सबै,
थावर नामकर्मकै उदैमैं रहावै है ।
तातैं है थावरकाय निहचै सरूप पाँचौं,
जिनराजवानीविषै जहाँ तहाँ गावै है ॥ २८ ॥

दोहा ।

थावरनामउदै भये, थावरकाय कहाय ।
दो-इंद्रिय-आदिकउदै, त्रसकाया प्रकटाय ॥ २९ ॥

गाथा ।

एदे जीवाणिकाया पंचविहा पुढविकाइयादीया ।
मणपरिणामविरहिदा जीवा एइंदिया भणिया ॥ ८ ॥

दोहा ।

इतने पृथिवी आदि है, काय पंच परकार ।
मन-परिनामरहित सदा, एकेंद्रिय अनिवार ॥ ३० ॥

सवैया इकतीसा ।

एई पृथिवीकायकादि भेद थावर अनादि,
पाँच परकार सारे जग अनिवार है ।

सूच्छिम और बादर दोइ दोइ विधिसेती,
एक एक कायविषै नाना विसतार है ॥
फास एकइंद्री-आवरणकै विनास भये,
जथाशक्ति जानै एक देहका विचार है।
सेष इंद्री-मन-आवरणउदैरूप लसै,
ऐसा भेद जानै विना कैसैं निसतार है ॥ ३१ ॥

दोहा।

थावरकायाकारि सदा, सकल लोक भरपूर।
जथाभेद ते नहिं लखैं, जे आतम अतिक्रूर ॥ ३२ ॥
जीवभेद ए जीव जो, जानै जिय मैं नाहिं।
सो जीवै जग जीव ज्यौं, जीवन निरफल माहिं ॥ ३३ ॥

अथ एकेन्द्रियाणां चैतन्यास्तित्वे दृष्टान्तः—गाथा।

अंडेसु पवड्ढंता गब्भत्था माणुसा य मुच्छगया।
जारिसया तारिसया जीवा एयेंदिया णेया ॥ ९ ॥

दोहा।

अंडज अंडाविषैं जथा, गर्भज मूछित जीव।
ज्यौं ए चेतन कहत त्यौं, एकेंद्रिया सदीव ॥ ३४ ॥

सवैया इकतीसा।

जैसेंकै अंडज-जीव अंडहुविषै वरतै,
गर्भवाले गर्भ जैसें और मूरछित हैं।
इनमैं कोई चेतना प्रगट तौ दीसै नाहिं,
(पै ?) जीवभाव सब इनहीमैं अछित है।

तैसैंकै एक इंद्रिय जीव चेतनासरूप,
बाहिर व्यापार सबै बुद्धिकै नसित है।
दौनौं जगा बुद्धि व्यापारका अदरसन है,
दृष्टिग्यान दौनौं जगा केवली लखित है ॥ ३५ ॥

दोहा।

जैसैं अंडादिकविषै, जीव चेतनारूप।
तैसैं थावरकायमैं, जीवदरव चिद्रूप ॥ ३६ ॥

अथ द्वीन्द्रियजीवानाह—गाथा।

संबुक्कमादुवाहा संखा सप्पी अपादगा य किमी।
जाणंति रसं फासं जे ते वेइंदिया जीवा ॥ १० ॥

दोहा।

संख-सीप-कृमिजाति औ, अपदग आदि अपार।
परस रसन जानै विषै, दो-इंद्रिय अनिवार ॥ ३७ ॥

सवैया इकतीसा।

फास औ रसन दोइ इंद्रियावरण सोइ,
छय-उपसम और इंद्रियावरण है।
फरस सुवाद वेवै घोंघा संख सीप कृमि
इत्यादिक जीव नाना मूढ़ता भरण है॥
अपने असेनी जीव मिथ्यातैं मगन तातैं,
लोकनाड़ी-विषै लसैं आपद धरण है।
ऐसैं दोइ इंद्री प्राणी जैनमैं बखानै तातैं,
ग्याता दया-भाव राखि ग्यानकै सरण है॥ ३८॥

दोहा।

जो दयालता-भावधरि, करै दया-परिनाम।
थावर त्रस दौनौं तजै, सो चेतन सुखधाम ॥ ३९ ॥

अथ त्रीन्द्रियजीवानाह—गाथा।

जूगागुंभीमक्कुणपिपीलिया विच्छियादिया कीडा।
जाणंति रसं फासं गंधं ते इंदिया जीवा ॥ ११ ॥

दोहा।

जूका कुंभी माकड़ी, चैंटी बीछू आदि।
परस रसन अरु गंध ए, ते-इंद्रीपद सादि ॥ ४० ॥

सवैया इकतीसा।

जूका कुंभी मकड़ी औ चैंटी बीछवादि जीव,
फार-रस-घ्राण-ग्राही तीन इंद्री घनै हैं।
ते-इंद्रीय जान नामकर्मकै उदयाधीन,
जगमैं मलीन डोलै नानारूप बनै हैं॥
सेष इंद्री दोइ और चित-आवरण जोर,
तातैं अमना सदीव गंथनिमैं गनै हैं।
ऐसैं जीव देखिकै दयालता न आई कबैं,
याहीतैं जगत-जीव दुःखरासि सनै हैं ॥ ४१ ॥

दोहा।

अपनी भूल अनादितैं, परा जगतमैं आप।
आपा-पर न पिछानई, सहत बहुत परिताप ॥ ४२ ॥

अथ चतुरिन्द्रियजीवानाह—गाथा ।

उद्दंसमसयमक्खियमधुकरभमरा पतंगमादीया ;
रूपं रसं च गंधं फासं पुण ते वि जाणंति ॥ १२ ॥

दोहा ।

डांस मसक माखी विरड़ि, भ्रांगी भ्रमर पतंग ।
रूप गंध रस फरस फुनि, जानत विषय प्रसंग ॥ ४३ ॥

सवैया इकतीसा ।

निर्विकार ग्यान-सुख-सुधारस-पान विना,
वाहिर सुखी है जीव इंद्रियाभिलाषी है ।
तातैं चौरिंद्रिय-जाति-नामकर्म बंध करै,
ताहीकै उदय माहिं आप दृष्टि राखी है ॥
कारन एक इंद्री और मनकै विचार विना,
सेष चारि इन्द्रीकरि स्वाद रीति चाखी है ।
कालका निमित्त पाय आप और आय प्रानी,
अपनेसरूप होई श्रीजिनेस साखी है ॥ ४४ ॥

दोहा ।

जब सरूपकी दृष्टि है, तब पररूप न कोइ ।
परकै सब परहरनतैं, रहि निरूप-पद सोइ ॥ ४५ ॥

अथ पञ्चेन्द्रियजीवानाह—गाथा ।

सुरणरणारयतिरिया वण्णरसप्फासगंधसद्दण्हू ।
जलचरथलचरखचरा वलिया पंचेंदिया जीवा ॥ १३ ॥

दोहा ।

सुर-नर-नारक-तिरिय-गति, इंद्रिय विषय प्रधान ।
जलचर-थलचर-खचर सब, पंचेंद्रिय बलवान ॥ ४६ ॥

सवैया इकतीसा ।

पंचेंद्रिय-जाति-नामकर्मके उदय भये,
पंचेंद्रियरूप सारे जीवौंमैं जगत है ।
तिनमैं कोई अमना मन-इंद्री विना डौलै,
केई मनधारी जीव समना लगत है ॥
देव-नर-नारकीकै समना कहावै जीव ।
पसू माहिं दौनौं भेद लोकमैं वगत है ।
ऐसैं पंचेद्रियपद पावै है अनेक वार,
पंचपद पावै नाहिं मूढ़ता पगत है ॥ ४७ ॥

दोहा ।

ए पंचेंद्रिय पद प्रगट, आपद-पदकी खानि ।
जो आपन-पदकौं लखै, तौ इन पदकी हानि ॥ ४८ ॥
जिन ए पद आपद लखै, ते आपद-पद नाहिं ।
जे आपद-पद नहिं लखै, ते आपद-पद माहिं ॥ ४९ ॥

अथेन्द्रियभेदेनोक्तानां जीवानां चतुर्गतिसम्बन्धत्वेनोपसंहारः-गाथा ।

देवा चउण्णिकाया मणुया पुण कम्मभोगभूमीया ।
तिरिया वहुप्पयारा णेरइया पुढविभेयगदा ॥ १४ ॥

दोहा ।

चतुरनिकाई देव हैं, करम-भोग-नर-भेद ।
तिरजग वहुत प्रकार हैं, नारक भूगत छेद ॥ ५० ॥

सवैया इकतीसा ।

देवगतिनाम देव-आयु-कर्मउदैसेती,
देवरूप धारी जीव चतुरनिकाय है ।

नरगतिनाम नर-आयु-उदै भये जीव,
करम वा भोगभूमिविषै उपजाय है ॥
पसूगति पसू-आयु-उदै पाय मही आदि,
पाँचौं इंद्री विषै भेद बहुधा कहाय है।
नरकगति नरक-आयु-उदै सात भूमि,
डोलै जैन बिना कहौ कैसैंके रहाय है ॥ ५१ ॥

दोहा।

च्यारौं गति ए कुगति हैं, परगति अगति मिलाप।
इन गति विगति जु गति लसै, सो गति सिवगति आप॥५२॥
जिन सिवगतिकी गति लखी, तिन गति लखी समस्त।
भव-गति गतिमैं जे परै, ते भव-गत सुख अस्त ॥ ५३ ॥

अथ गत्यायुर्नामकर्मोदयनिवृत्तत्वाद्देवादीनां पर्यायाणामनात्मस्वभावोद्योतनं—गाथा।

खीणे पुव्वणिबद्धे गदिणामे आउगे च ते वि खलु।
पापुण्णंति य अण्णं गदिमाउस्सं सलेसवसा ॥ १५ ॥

दोहा।

गति आऊखा पूर्वली, बँधी सुपूरन होइ।
और आयुगति पाइए, लेस्यावसतैं कोइ ॥ ५४ ॥

सवैया इकतीसा।

जगतविषै जीवौंकौं गतिनाम आयुकर्म,
फलभार देइ देइ आपहीतैं खिरै हैं।

आगै नई गति-आयु-दायक कषाय-राग—
पगी योगवृत्ति लेस्या जीवविषै थिरै है ॥
तातैं गति और आयु नई ठौर लहै जीव,
तैसैं नई नई ठौर और गति फिरै है ।
तातैं आपरूप नाहिं गति-आयु-कर्म माहिं,
ग्यानी ग्यान भिन्न जानि काल पाय तिरै है॥५५॥

दोहा ।

गति आऊखा कर्म ए, जुदे प्रगट जग माहिं ।
एक होइ इक जात है, ज्यौं बादर परछाहिं ॥ ५६ ॥

सोरठा ।

ज्यौं बादर परछाहिं, बादर बादरपरि जुदी ।
त्यौं गति आयु लहाहिं, जुदी जुदी करमहुँ करी ॥५७॥

अथैतेषामेव विशेषमाह—गाथा ।

एदे जीवणिकाया देहप्पविचारमस्सिदा भणिदा ।
देह-विहूणा सिद्धा भव्वा संसारिणो अभव्वा य ॥ १६ ॥

दोहा ।

एई जीव निकाय सब, देह-विषय आधीन ।
देह विहीना सिद्ध हैं, भव्याभव्य मलीन ॥ ५८ ॥

सवैया इकतीसा ।

जेते जगवासी जीव तेते देहधारी सवै,
देहकै अधारी सिद्ध सिद्धगतिविषै हैं ।

सुद्ध होनै जोग भव्य होनै जोग नाहिं सुद्ध-
ते अभव्य जग माहिं दौनौं रासि दिखैं हैं ॥
जैसैं मूंग पकै एक एक पकै नाहिं किहूँ,
वस्तुका सुभाव ऐसा साहजीक लिखै हैं।
जाकै भेद सत्ता ऐसा जग्या जथारूप जैसा,
सोई सुद्ध-पद पावै जिनराज सिखै हैं ॥ ५९ ॥

दोहा ।

सिद्धरूप जिनकै हियै, सिद्ध भयौ पर त्यागि।
तेई सिद्ध सुभावतैं, सिद्ध भये जग जागि ॥ ६० ॥

सोरठा ।

सिद्ध सुद्ध निजरूप, सिद्ध सुद्धकै जानतैं।
सिद्ध सुभाव अनूप, अथासिद्ध सिद्धहुँ विषै ॥ ६१ ॥

अथ व्यवहारजीवत्वैकान्तप्रतिपत्तिनिरासः—गाथा ।

ण हि इंदियाणि जीवा काया पुण छप्पयार पण्णत्ता ।
जं हवदि तेसु णाणं जीवो त्ति य तं परूवंति ॥ १७ ॥

दोहा ।

इंद्रिय जीव सुभाव नहिं, षट प्रकार फुनि काय ।
जो इनमैं ग्यायक लसै, सोई जीव कहाय ॥ ६२ ॥

सवैया इकतीसा ।

एई एक इंद्री आदि पृथ्वीकायिकादि भेद,
जीव पुदगल सदा एक अवगाह है।

विवहार-नय देखै जीवकी प्रधानतातैं,
जीव नाम पावैं सबै दौनौं एक राह है ॥
निहचै नाहिं तिनमैं कोइ चेतना-सुभाव,
जड़ जाति लिये एक सगरे निवाह है।
तिनहीमैं आप-पर-परका समान ग्यान,
सोई जीव नाम ताकौं जानै तेई साह है ॥ ६३ ॥

दोहा।

इंद्रिय काया विविध पद, सगरा जीव-निवास।
निहचै ग्यानसरूप है, चेतन विस्व-विलास ॥ ६४ ॥

अथान्यासाधारजीवकार्यख्यापनं—गाथा।

जाणदि पस्सादि सव्वं इच्छदि सुक्खं विभेदि दुक्खादो।
कुव्वदि हिदमहिदं वा भुंजादि जीवो फलं तेसिं ॥ १८ ॥

दोहा।

जानै देखै सरवकौं, इच्छै सुख दुख-भीति।
करै सुहित अरु अहितकौं, भुंजै फल विपरीत ॥ ६५ ॥

सवैया इकतीसा।

चेतना-सुभाव जीव तातैं सब देखै जानै,
नभ आदि जैसैं तैसैं पुग्गल अचेत है।
सुखका भिलाषी होइ दुखमैं उदेग जोइ,
हिताहितरूप जीव कल्पना समेत है ॥
सुभासुभ कर्म-फल इष्टानिष्ट-भोग-क्रिया,
ताका करतार जीव चेतना निकेत है।

एती लोक-क्रिया जीव जाहीसमै लोकि जानै,
ताहींसमै लोक न्यारा सुद्धता उपेत है ॥ ६६ ॥

दोहा।

जीवक्रिया जिन जीवने, लखी जीवमहिं सार।
तिन अजीव-किरिया तजी, पाया भव निरधार ॥६७॥

अथ जीवाजीवव्याख्योपसंहारः—गाथा।

एवमभिगम्म जीवं अण्णेहिं वि पज्जयेहिं बहुगेहिं।
अभिगच्छदु अज्जीवं णाणंतरिदेहिं लिंगेहिं ॥ १९ ॥

दोहा।

ऐसैं बहु परजाय-गत, जीव पदारथ जानि।
सकल अचेतन चिह्नगत, सब अजीव पहिचानि ॥६८॥

सवैया इकतीसा।

ऐसैं विवहारकरि जीव ठान गुनठान,
मारगना आदि भेद जीवरूप कहे हैं।
निहचै हैं राग-दोष-मोह परिनाम नाना,-
रूप सो असुद्ध जीव लोक माहिं रहे हैं ॥
सुद्ध निहचैसौं सुद्ध सिद्ध-परजायरूप,
भूप छहौं द्रव्यविषै मोह-थान गहे हैं।
जीवतैं अजीव विपरीतरूप आगै अब,
कहैं हैं मुनीस जातैं आप पर लहे हैं ॥ ६९ ॥

दोहा।

सकल वस्तु इह लोकमैं, जीव अजीव विथार।
जीव-कथन पूरा भया; कहत अजीव विचार ॥ ७० ॥

इति जीवपदार्थस्वरूपम्।

अथाजीवपदार्थस्वरूपं—गाथा।

आगासकालपुग्गलधम्माधम्मेसु णत्थि जीव गुणा।
तेसिं अचेदणत्तं भणिदं जीवस्स चेदणता॥ २०॥

दोहा।

पुग्गल धरमाधरम नभ, काल जीवगुन नाहिं।
इनमैं लसै अचेतना, चेतनता जिय माहिं॥ ७१॥

सवैया इकतीसा।

नभ काल पुग्गल औ धर्माधर्म पाँचौंविषै,
चेतना विसेष कोई काहू नाहिं वरता।
मन आदि पाँचौं माहिं वरतै अचेतनता,
धरम सामान्यरूप वस्तु-भाव भरता॥
जीवदर्व माहिं एक चेतनता जानि लसै,
पाँचौं ते विसेष पारै नाना व्यक्ति धरता।
ऐसी वस्तुसीमा हियै किये समकिती जीव,
न्यारा पर-भावसेती आप-भाव करता॥ ७२॥

दोहा।

पाँचौं दरव अचेत हैं, जीव चेतनावंत।
भेदग्यानकरि जौ लखै, सो नर सम्यकवंत॥ ७३॥

अथाकाशादीनामचेतनत्वसामान्ये पुनरनुमानं—गाथा।

सुहदुक्खजाणणा वा हिदपरियम्मं च अहिदभीरुत्तं।
जस्स ण विज्जदि णिच्चं तं समणा विंति अज्जीवं॥ २१॥

दोहा ।

सुख-दुख-जानपना सुहित,-जतन अहित-भय-भाव ॥
जाकै इनमैं कछु नहीं, सो अजीव जड़भाव ॥ ७४॥

सवैया इकतीसा ।

जैसैं चेतनासरूप जीव लोक माहिं कहा,
सुख माहिं सुखी होइ दुख माहिं दुखिया ।
तैसैं नभ आदि पाँचौं द्रव्य जड़जाति कहे,
पर आप जानै नाहिं नाहिं दुखी सुखिया ॥
हितकौं वढ़ावै सदा अहितकौं वढ़ावै है, (?)
जैसैं जीव तैसैं कहा नभ आदि रखिया (?) ।
तातैं इन पाँचौं माहिं चेतनासरूप नाहिं,
चेतनासरूप जीव आपै मोख सुखिया ॥ ७५ ॥

दोहा ।

सुख दुख जानै जीव सब, सुख-दुख-रूप न जीव ।
पुग्गल सुख-दुख-पिंड है, जड़तारूप सदीव ॥ ७६ ॥

अथ जीवपुद्गलयोः संयोगविभेदनिबन्धनमाह—गाथा ।

संठाणा संघादा वण्णरसफासगंधसद्दा य ।
पोग्गलदव्वप्पभवा होंति गुणा पज्जया य बहू ॥ २२ ॥
अरसमरूवमगंधमव्वत्तं चेदणागुणमसद्दं ।
जाण अलिंगग्गहणं जीवमणिद्दिट्ठसंठाणं ॥ २३ ॥

दोहा ।

जे संठान सँघात है, वरन परस रस गंध ।
सवद आदि पुग्गल जनित, गुन-परजाय प्रबंध ॥ ७७ ॥

अरस अरूप अगंध है, विकत सवद बिन ग्यान।
जीव अलिंगग्रहन है, अनिर्दिष्ट संठान ॥ ७८ ॥

सवैया इकतीसा।

समचतुरस्र आदि संस्थान औ संघात,
रूप रस गंध फास सवद-पुंज जेते हैं।
वरनादि च्यारौं गुन संठानादि परजाय,
इंद्री विषै जोगि वस्तु अनू-द्रव्य तेते हैं ॥
रूप रस गंध फास विना औ सवद विना,
असंठान असंघात गुनरूप केते हैं।
चेतना सरूप औ अतींद्रिय अनूप लसै,
जीव औ पुग्गलमैं वस्तुभेद एते हैं ॥ ७९ ॥

दोहा।

वस्तुभेद जिन वस्तुमैं, वसत सदा अनिवार।
वस्तुरूप तिनकौं लखत, वस्तु होइ निरधार ॥ ८० ॥

सोरठा।

वस्तु वसत जग माहिं, यथा-वस्तु ग्याता लखै।
वस्तु अवस्तु लखाहिं, मिथ्यावस मिथ्यामती ॥८१ ॥

दोहा।

मूल पदारथ दोइ हैं, जीवाजीव समान।
तिनहीकै संजोगमैं, सात पदारथ आन ॥ ८२ ॥

अथ संयोगपरिणामनिवृत्तेतरसप्तपदार्थानामुपोद्घातार्थं जीवपुद्गलकर्मचक्रमनुवर्ण्यते—गाथा।

जो खलु संसारत्थो जीवो तत्तो दु होदि परिणामो ।
परिणामादो कम्मं कम्मादो होदि गदिसु गदी ॥ २४ ॥

गदिमधिगदस्स देहो देहादो इंदियाणि जायंते ॥
तेहिं दु विसयग्गहणं तत्तो रागो च दोसो वा ॥ २५ ॥

जायदि जीवस्सेवं भावो संसारचक्कवालम्मि ।
इदि जिणवरेहिं भणिदो अणादिणिधणो सणिधणो वा ॥ २६ ॥

दोहा ।

जगतनिवासी जीवकै, रागादिक परिनाम ।
करम होइ परिनामतैं, करमथकी गति नाम ॥ ८३ ॥
गतिमैं गतिकै देह है, इंद्रिय देहमझारि ।
तिनतैं विषय गहन बहुरि, राग दोष अवधारि ॥८४॥
जगतवासमैं जीवकौं, दोइ भाव या भाँति ।
आदि अंत अवसांत विन, जिन कहवतकी पाँति ॥८५॥

सवैया इकतीसा ।

जगवासी जीवाविषै मोह-राग-दोषरूप,
परिनाम वर्तमान सदा आवरतु है ।
ताही परिनामका निमित्त पाय द्रव्यकर्म,
नानारूप नवा बाँध जीवमैं भरतु है ॥
करमकै उदै आये गतिनाम उदै होइ,
तातैं च्यारौं गति माहिं देहकौं धरतु है ।
देहमैं इंद्रिय पाँच खैंचि सकै नाहिं जीव,
भवरूप गरतैमैं दौरिकै परतु है ॥ ८६ ॥

याही जग माहीं जीव विषयी अनादिहीका,
आपरूप भूलि भूलि विषै धूल रोलै है।
कहूँ राग-रंजित है कहूँ दोष गंजित है,
मोहकी गहलतासौं सदाकाल डोलै है॥
नाना कर्म बंध करै अंध होइ लोक फिरै,
एक कर्म बाँधै एक कर्म गाँठि खोलै है।
ऐसैं ही अभव्य ढाल ढली है अनंतकाल,
भव्य काल पाय तिरै जिनराज बोलै हैं ॥८७॥

दोहा।

जे आतम आतम-विमुख, परै आतमा भूलि।
ते आतम रु अनातमा, दौनौं समरस तूल ॥ ८८ ॥

दरसनमोह-विपाकतैं, होइ कलुष परिनाम।
मोह नाम ताकौं कहत, विकत गहलता धाम ॥ ८९ ॥

चारितमोह उद्योततैं, होइ हरख-विखसाद।
राग दोष तिनकौं कहत, आतमगुनकै वाद ॥ ९० ॥

सोरठा।

सो तीनौं जगमूल, राग दोष अरु मोह फुनि।
करै आतमा भूल, करम बढ़ावै विविध पर ॥ ९१ ॥

अथ पुण्यपापयोगपरिणामस्वरूपमाह—गाथा।

मोहो रागो दोसो चित्तपसादो य जस्स भावम्मि।
विज्जदि तस्स सुहो वा असुहो वा होदि परिणामो ॥ २७ ॥

दोहा ।

मोह राग अरु दोष जसु, चित प्रसन्नता होइ ।
ता आतमकै सुभ असुभ, करमरूप फल होइ ॥ ९२ ॥

सवैया इकतीसा ।

दरसनमोहनीकै उदै गहलताई है,
तत्व अर्थ जानै नाहिं मोह ताकौं कहिए ।
इष्टविषै प्रीति राग दोष है अनिष्टविषै,
दौनौंरूप मोह एक-भाव पाप लहिए ॥
मोहमंदउदै भये चित्तमैं प्रसन्नताई,
दान-पूजा आदि तातैं पुण्यबंध गहिए ।
दौनौंतैं निराला जानि चिदानंद आप मानि ।
तीनौं भाव नासि नासि मोखरूप रहिए ॥ ९३ ॥

दोहा ।

पुण्य पाप ए आपतैं, न्यारे सदा विचार ।
मोखरूप बाधक सदा, साधक-पद संसार ॥ ९४ ॥

अथ पुण्यपापस्वरूपं दर्शयति—गाथा ।

सुहपरिणामो पुण्णं असुहो पावंति हवदि जीवस्स ।
दोण्हं पोग्गलमत्तो भावो कम्मत्तणं पत्तो ॥ २८ ॥

दोहा ।

जीव भाव सुभ पुण्य है, असुभ-भाव है पाप ।
दौनौंतैं पुग्गलकरम, होइ विविध परिताप ॥ ९५ ॥

सवैया इकतीसा।

जीव परिनाम सुभ भाव-पुण्य नाम कह्या,
अशुभ परिनामकौं भाव-पाप कहिए।
भाव-पुण्य-कारनतैं पुद्‌गल-परमानु,
कारमानरूप पुंज द्रव्यपुण्य लहिए॥
भावपापका निमित्त कारमान वर्गना है,
पुंजरूप द्रव्य-पाप काजरूप गहिए।
ऐसैं पुण्य-पापसेती सुद्ध उपयोग न्यारा,
आपरूप जानैंसेती कर्मपुंज दहिए॥ ९६॥

चौपई।

नयं अशुद्ध निहचैंकरि नाना, उपादान चेतन-परिनामा।
सुभ अरु असुभ होइ परिनमना, कारजरूप विविध है गमना ९७
तैसैं अन-उपचारित कहानी, असदभूतविवहार वखानी।
भावकरम ए दरवकरमकै, कारनरूप लसै जु भरमकै॥ ९८॥
तातैं भाव पदारथ कहिए, पुण्य-पाप दौनौं पद लहिए।
अव सुन सगरी दरवित वातैं, पुण्य-पाप कहवाति है जातैं॥ ९९॥
निहचैनयकरि करमवरगना, उपदानतैं करम उमगना।
तैसैं अन-उपचरित वताया, असदभूतविवहार जताया॥१००॥
जीव सुभासुभ-भाव करनतैं, पुण्य-पापमय दरव धरनतैं।
पुण्यपाप जु पदारथ नीकै, दरवित साता आदि सुठीकै॥१०१॥

दोहा।

दरवित भावित प्रगट है, पुण्य-पाप-पद दोइ।
पुण्यउदै सुख होत है, पापउदै दुख होई॥ १०२॥

निहचै अरु विवहारकरि, कहे पुण्य अरु पाप।
आत्मीक मूरत विना, मूरत अनू-मिलाप ॥ १०३ ॥

अथ मूर्तकर्मस्वरूपमाह— गाथा।

जह्मा कम्मस्स फलं विसयं फासेहिं भुंजदे णियदं।
जीवेण सुहं दुक्खं तह्मा कम्माणि मुत्ताणि ॥ २९ ॥

दोहा।

करमपुंजकै फलविषै, सुख-दुखरूपी मर्म।
इंद्रियकरि जिय भोगवै, तातैं मूरत कर्म ॥ १०४ ॥

सवैया इकतीसा।

कर्मके विपाक माहिं जो जो फल उदैरूप,
सो सो पाँच इंद्रियका विषै ही बताया है।
सोई पाँच इंद्रीकरि जीव भोग-योग सवै,
सुखी दुखीरूप नाना भेदसौं जताया है।
इंद्री मूरतीक तातैं जीव इंद्रीधारी मूर्त,
विषै मूरतीक दिखै कारज सुहाया है।
कारनसरूप तातैं करमसौं मूरतीक,
कारनसा कारज है ग्यानी सोध पाया है ॥१०५॥

दोहा।

मूरत जाकै फल लसैं, मिलै करम जो होइ।
सो मूरत कहो क्यौं नहीं, पुग्गलरूपी सोइ ॥१०६॥

अथ मूर्तकर्मणोरमूर्तजीवकर्मणोश्च बंधप्रकारमाह--गाथा।

मुत्तो फासदि मुत्तं मुत्तो मुत्तेण बंधमणुहवदि।
जीवो मुत्तिविरहिदो गाहदि ते तेहिं उग्गहदि ॥ ३० ॥

दोहा।

मूरत मूरत परस है, मूरतसौं संबंध।
जीव अमूरत करमकौं, गहै गहानै अंध ॥ १०७ ॥

सवैया इकतीसा।

याही जग माहिं जीव-संग लग्या चल्या आया,
मूरत करम-पुंज संतति-सुभावतैं।
फास आदि भेद तातैं साहजीक लसैं नवे,
कर्मसेती एकमेक होहि बंध दावतैं ॥
निहचै अमूरतीक जीव राग आदिभाव,
कर्मपुंज बंध करै चेतना-विभावतैं।
ऐसा बंधभेद जानि आपा-पर भिन्न मानि,
भेदग्यानी मोख पावै बंधकै अभावतैं ॥ १०८ ॥

दोहा।

एकमेक अवगाहता, एकमेक परदेस—
दोइ दरव इकठे रहै, सोई बंध विसेप ॥ १०९ ॥

इति पुण्यपापस्वरूपम्।

अथास्रवस्वरूपं निरूपयति—गाथा।

रागो जस्स पसत्थो अणुकंपा संसिदो य परिणामो।
चित्ते णत्थि कलुस्सं पुण्णं जीवस्स आसवदि ॥ ३१ ॥

दोहा.

जिसकै राग प्रसस्त है, अनुकंपा परिनाम।
चित्तकलुपता है नहीं, सो पुण्यास्रव धाम ॥ ११० ॥

सवैया इकतीसा ।

जीवकै प्रसस्त राग अनुकंपा परिनाम,
  चित्तता-कालुष नाहिं तीनौं सुभ भावना ।
पुण्यरूप आस्रवकै वाहिरकै कारन है,
  तातैं भाव-पुण्य मुख्य आतमीक पावना ॥
ताहीका निमित्त पाय सुभ द्रव्यकर्मपुंज,
  जोग द्वार आवै पुण्य आस्रव कहावना ।
ऐसा भाव-द्रव्यरूप आस्रव सरूप जानि,
  आपरूप न्यारा मानि आप माहिं आवना ॥१११॥

दोहा ।

राग दोष अरु मूढ़ता, ए भावास्रव भेद ।
पुग्गल-पिंड-समागमन, दरवित-आस्रव भेद ॥ ११२ ॥

अथ प्रशस्तरागस्वरूपमाह—गाथा ।

अरहंतसिद्धसाहुसु भत्ति धम्मम्मि जाय खलु चेठा ।
अणुगमणं पि गुरूणं पसत्थरागो त्ति वुच्चंति ॥ ३२ ॥

दोहा ।

जिन सिध साधु भगति सुदिढ़, धरमविषै अनुराग ।
गुरु समीपका अनुगमन, सो परसंसित राग ॥११३॥

सवैया इकतीसा ।

पूजै अरहंत सिद्ध आचारिज उपाध्याय,
  साधु पंच परमेष्ठीविषै भक्ति करनी ।
धर्म विवहाररूप चारित आचाररूप,
  वस्तु-धर्म-साधनमैं प्रीति रीति धरनी ॥

पंचाचारी गुरुहूँकी उपासना सदाकाल,
एई तीनौं मिथ्यारीति मोखकी कतरनी ।
ग्यानीकै सरूप धरै तीव्रराग नास करै,
एई तीनौं क्रियारूप मोखकी वितरनी ॥ ११४ ॥

दोहा ।

ग्यान-क्रिया ग्यानी करै, और न किरिया कोइ ।
जानन-हारा सबनिका, सबहीसा क्यौं होइ ।

सोरठा ।

जो प्रसस्त अनुराग, सो सिवसाधक ग्यानमैं ।
ज्यौं विष तनक विभाग, सुधा-समुदमैं सुधासम ॥११५॥

अथानुकम्पास्वरूपमाह—गाथा ।

तिसिदं बुभुक्खिदं वा दुहिदं दट्ठूण जो दु दुहिदमणो ।
पडिवज्जदि तं किवया तस्सेसा होदि अणुकंपा ॥ ३३ ॥

दोहा ।

तृसित बुभुच्छित दुखितकौं, देखि दुखित जो होइ ।
प्रतीकार करुना करै, तस अनुकंपा जोइ ॥ ११६ ॥

सवैया इकतीसा ।

तृषासौं तृषित भारी भूखसौं बुभुच्छाधारी,
दुखसौं दुखित देह सारी विकराल है ।
ऐसा नरनारीरूप रोग-कूप-बूढ़ा देखि,
हाहाकै अग्यानी (जीव?) आकुल वेहाल है ।

ग्यानी अनुकंपा करै आकुलता-भाव हरै,
कर्मका विपाक जानै उद्यम विसाल है।
अग्य है अग्यानी भव-कूपका निदानी सदा,
मोखकी निसानी ग्यानी ग्यानमैं त्रिकाल है ॥११७॥

दोहा।

दुखित-जीव-दुख देखिकै, जो दुख करि है दूर।
अनुकंपा परिनाम सो, करुनारस भरपूर ॥ ११८ ॥
पर-मिलापमैं आपकौं, देखै गुनकरि कंप।
पूरन-गुन पूरन लखै, सो कहिए अनुकंप ॥ ११९ ॥

अथ चित्तकलुषतास्वरूपमाह—गाथा।

कोधो व जदा माणो माया लोभो व चित्तमासेज्ज।
जीवस्स कुणदि खोहं कलुसो त्ति य तं बुधा बेंति ॥ ३४ ॥

दोहा।

क्रोध मान माया प्रगट, लोभ चित्तमैं आय।
जीव छोभकौं करतु है, सो कालुष्य कहाय ॥१२०॥

सवैया इकतीसा।

क्रोध मान माया लोभ तीव्ररूप उदै आये,
चित्तविषै छोभ होय संकलेस-भावतैं।
सोई चित्त-कलुषाई ग्रंथमैं बताई सदा,
चित्तकी प्रसन्नताई मदउदै दावतैं ॥
कादाचित्करूप लसै सबही कषाय-पुंज,
ग्यानी औ अग्यानीविषै जैसैंही कहावतैं।

चित्तकी कलुषताई दूरकरि सकै ग्यानी,
जिनने बताई सदा वस्तुकै लखावतैं ॥ १२१ ॥

दोहा ।

चित्त-कलुप जहाँ है नहीं, सो है अलख लखाव ।
ताकै लखते लखत है, अलख सुलखका भाव ॥ १२२ ॥

अथ पापास्रवस्वरूपमाह—गाथा ।

चरिया पमादबहुला कालुस्सं लोलदा य विसयेसु ।
परपरितावापवादो पावस्स य आसवं कुणदि ॥ ३५ ॥

दोहा ।

विपय-लोलता कलुप-चित, चरियासहित प्रमाद ।
पर-परितापपवाद विधि, पापास्रव विधिवाद ॥ १२३ ॥

सवैया इकतीसा ।

जगमैं प्रमादरूपी क्रिया है अनादिहीकी,
चित्तविपै मूढ़तासौं अतिही कलुपता ।
विपयौंमैं लोलताई परकौं आतापताई,
परापवादताईसौं वादरूप रूखता ॥
एई पाँचौं परिनति असुभ है भावपन,
द्रव्यपार करता है आतम विमुखता ।
ऐसा भाव द्रव्य पाप आपनैं निराग करै,
ग्यानी सरवंग सुद्ध ग्यान माहिं पुखता ॥१२४॥

दोहा ।

पापरूप जब आप है, तब आपा अति अंध ।
विकलरहित सुख मूढ़गत, करै विविधविधि बंध ॥१२५॥

अथ पापास्रवभूतभावप्रपंचाख्यानं- गाथा ।

सण्णाओ य तिलेस्सा इंदियवसदा य अत्तरुद्दाणि ।
णाणं च दुप्पउत्तं मोहो पावप्पदा होंति ॥ ३६ ॥

दोहा ।

संग्या लेस्या आदि त्रय, इंद्रियवसता होय ।
आरत रुद्र कुग्यानता, मोह पाप-पद सोय ॥ १२६ ॥

सवैया इकतीसा ।

तीव्र-मोहउदै होइ आहारादि संज्ञा चारि,
लेस्या तीन कृष्ण आदि परिनाम-लेस है ।
राग-दोषउदैवस इंद्रिय अधीनताई,
इष्टकै वियोग आदि आरत कलेस है ॥
कषाय क्रूरताई है हिंसानंद आदि रौद्र,
दुष्टनयाधीन ग्यान मूढ़ता निवेस है ।
एई भाव-पापास्रव द्रव्यपाप आस्रव है,
इनसौं निराला आप सुद्ध उपदेस है ॥ १२७ ॥

दोहा ।

पुण्य-पापतैं आपकौं, न्यारा करै जु कोइ ।
सो नर सारा सुख लहै, आपद-पदकौं खोइ ॥१२८॥

इत्यास्रवपदार्थस्वरूपम् ।

अथ संवरस्वरूपं दर्शयाति—गाथा ।

इंदियकसायसण्णा णिग्गहिदा जेहिं सुट्ठुमग्गम्मि ।
जावत्तावत्तेहिं पिहियं पावासवं छिद्दं ॥ ३७ ॥

दोहा ।

इंद्रिय संग्य कषायका, निग्रह जावत काल ।
तितना काल ढक्या रहै, पापास्रवका जाल ॥ १२९ ॥

सवैया इकतीसा ।

रत्नत्रयरूप मोख-मारग जिनेस कह्या,
सोई आपरूप जानि उद्यम सुकरना ।
इंद्रिय कषाय संग्या तीनौंकी अवग्याकरि,
निग्रह विधानसेती सुद्ध भाव भरना ॥
जेता काल तेता काल पापरूप द्वार रुकै,
दौनौं रूप जैसैं तोय ...करना ।
सोई सुभ संवर है कर्मवैरी संगर है,
गुनकौ अंडवर है आपरूप धरना ॥ १३० ॥

दोहा ।

नूतन कर्म-निरोधका, संवर कहिए नाम ।
पर-मिलाप तजि आपगत, सुद्धातम परिनाम ॥ १३१ ॥

अथ संवरस्य सामान्यस्वरूपमाह—गाथा

जस्स ण विज्जादि रागो दोसो मोहो व सव्वदव्वेसु ।
णासवादि सुहं असुहं समसुहदुक्खस्स भिक्खुस्स ॥ ३८ ॥

दोहा ।

राग दोष जसु मोह नहिं, सरव अरथमैं काज ।
सुभ अरु असुभ न आस्रवै, सम-सुख-दुख मुनिराज ॥१३२॥

सवैया इकतीसा ।

रागरूप दोषरूप मोहरूप भाव जाकै,
सुपर दरवविषै नैक नाहिं भावै है ।
निर्विकार चेतना-सुभाव एक आतमीक,
दुख-सुखन्यारा सोई भिच्छुक कहावै है ॥
ताकै सुभासुभरूप कर्म कोई आवै नाहिं,
संवर सु होता जाइ गुनकौं वढ़ावै है ।
भावरूप संवरतैं द्रव्यकर्म संग रहै,
आतमा सरूपगामी आप माहिं आवै है ॥ १३३ ॥

दोहा ।

जो आतम आतमविषै, आतम लखि थिर होइ ।
सो संवर संवरन है, सकल करमकौं जोइ ॥ १३४ ॥

अथ विशेषेण संवरस्वरूपं निरूपयति—गाथा ।

जस्स जदा खलु पुण्णं जोगे पावं च णत्थि विरदस्स ।
संवरणं तस्स तदा सुहासुहकदस्स कम्मस्स ॥ ३९ ॥

दोहा ।

पुण्यपाप नाहिं जोगमैं, जा मुनिकै जिस वार ।
ताकै तव संवरन है, करम सुभासुभ द्वार ॥ १३५ ॥

सवैया इकतीसा ।

सवतैं निवृत्त मुनि विरतिकै जोगौंविषै,
सुभासुभरूप परिनामका निवरना ।

जाहीसमै होइ ताहीसमै सुभासुभरूप,
द्रव्यकर्म-संवर है कर्मका अकरना ॥
कारन अभाव होतैं कारज अभाव होइ,
कारनकै होतैं काज लोकमैं समरना।
भावरूप संवरतैं द्रव्यरूप संवर है,
भेद-ग्यान-मारगतैं मोखमैं उतरना ॥ १३६ ॥

इति संवर-स्वरूपम्।

अथ निर्जरास्वरूपमुपदर्शयति—गाथा

संवरजोगेहिं जुदो तवेहिं जो चिट्ठदे बहुविहेहिं।
कमाणं णिज्जरणं बहुगाणं कुणादि सो णियदं ॥ ४० ॥

दोहा।

संवर-जोगविमलसहित, विविध तपोविधि धार।
बहुत करम-निर्जर-करन, सो मुनि त्रिभुवन सार ॥ १३७ ॥

सवैया इकतीसा।

आस्रवनिरोध संवर और सुद्धोपयोग,
इन दौनौंसेती सदा जो मुनि चरतु है।
वाहिर अभ्यंतर है वारह प्रकार तप,
तातैं कर्मनिर्जरासौं वंधन गरतु है ॥
तातैं कर्मवीज नास करने समर्थ एक,
सुद्ध-उपयोग भाव निर्जरा करतु है।
ताकै परभावसेती कर्मराशि नीरस है,
सोई दर्वनिर्जरा है मोखकौं धरतु है ॥ १३८ ॥

दोहा ।

पूरव-संचित करमकौ, एकोदेस विनास ।
सो निर्जरा कहान है, ज्यौं जीरन-आवास ॥ १३९ ॥

अथ मुख्यनिर्जराकारणोपन्यासः—गाथा ।

जो संवरेण जुत्तो अप्पट्ठप्पसाधगो हि अप्पाणं ।
मुनिऊण झादि णियदं णाणं सो संधुणोदि कम्मरयं ॥ ४१ ॥

दोहा ।

जो संवर-संजुगत है, आपा साधै आप ।
ग्यानरूपकै ध्यानतैं, करै न करम-मिळाप ॥ १४० ॥

सवैया इकंतीसा ।

संवर संयुक्त होइ वस्तुरूप आपा जोई,
परकै मिलापसेती आप न्यारा करई ।
अपने प्रयोजनमैं लगै आप जानिकरि,
आपतैं अभिन्न ग्यान आपरूप धरई ॥
रागदोष-चिकनाई आपतैं जुदाई जानी,
तातैं रूखै अंग सब कर्मधुलि झरई ।
यातैं धर्म-शुक्ल-ध्यान निर्जराकौ हेतु है, ।
.... ॥ १४१ ॥

दोहा ।

....ध्यान ।
ग्यानरूपकै ध्यानतैं, होइ अंत निरवान ॥ १४२ ॥

अथ ध्यानस्वरूपं निरूपयति—गाथा।

जस्स ण विज्जदि रागो दोसो मोहो व जोगपरिकम्मो ॥
तस्स सुहासुहडहणो ज्झाणमओ जायए अगणी ॥ ४२ ॥

दोहा।

राग-दोष नहिं मोह फुनि, जोग नाहिं अस जास।
ध्यान-अगनिकरि तासकै, करम-सुभासुभ नास ॥ १४३ ॥

सवैया इकतीसा।

जाहीसमै जोगी-जीव दर्सन-चारित्र-मोह,—
कर्मकै विपाक सबै न्यारारूप करता।
राग-दोष-मोह तीनौं इनकौ अभाव कीनौं,
सुद्ध ध्यानरूप आपा आप माहिं परता ॥
ताहीसमै काय-वाचा-मनसौं निराला आप,
चेतना अचलरूप कर्म नाहिं वरता ॥
तातैं पुरुषार्थ-सिद्ध-साधक है ध्यान-वह्नि,
पुराकर्म दाहि दाहि सुद्धरूप धरता ॥ १४४ ॥

दोहा।

सुद्ध-सरूपविषै अचल चेतनता सो ध्यान।
यातैं आतम-लाभका, कारनरूप निदान ॥ १४५ ॥

चौपई।

केई कहैं ध्यान अब नाहीं, पंचमकाल-विषमता माहीं।
विषय-कषाय-प्रबलता भारी, हीनसत्व चेतना विकारी ॥

यहु तौ वात कहावति साची, ग्यानकथनमैं पर कछु काचौं ।
ध्यान नाम जो कहवति सारे, सो तौ अरथ और कछु धारे ॥
सुद्धसरूप अचल जो ग्यानी, सो चेतना कहावति ध्यानी ।
सम्यकदरसन सुद्ध प्रवीना, सो चौथा गुनथान नवीना १४८
तातैं पंचमकालविषै है, स्व-परभेद जिनवानि लिखै है ।
रतनत्रय आतम परनाली, कालजोग जिन सहज निहाली १४९
ते चेतन चहुँ गतिमैं आछै, इंद्रलोक-सुख पावै पाछै ।
तहतैं चयकरि राजाधिराजा, साधै सकल मनोरथ काजा॥१५०॥
संसारी-सुख पूरन करिकै, होहिं दिगंवर सव परिहरिकै ।
अचल अनूपम सिवपद पावै, वहुरि न जगत माहिं फिरि आवै ॥
तातैं पंचमकाल है नीका, परंपरा सिवसाधन ठीका ।
यातैं वाहिर-कारन सारे, आपै सनमुख होइ निहारे ॥१५२॥
जव आपन आपै नहिं समुहा, तव वाहिर कारन सव विमुहा।
तातैं उपादान है आपा, वाहिर सवसौं सहज मिलापा ॥१५३॥

दोहा ।

उपादान अरु निमितका, जिन कीना निरवार ।
तिन आतम आतम लहा, पाया भवनिधि-पार ॥ १५४ ॥
दुरमेधा जीवन सहल, श्रुतका नाहिंन पार ।
सोई सीख ज़ु सीखिए, जो जर-मरन-निवार ॥ १५५ ॥

इति निर्जरास्वरूपम् ।

अथ बंधस्वरूपं प्रतिपादयति--गाथा ।

जं सुहमसुहमुदिण्णं भावं रत्तो करेदि जदि अप्पा ।
सो तेण हवदि बंधो पोग्गलकम्मेण विविहेण ॥ ४३ ॥

दोहा।

उदित सुभासुभ-भावकौं, करै सरागी-जीव।
तिसहीकरि नूतन बँधै, पुग्गलकर्म सदीव॥ १५६॥

सवैया एकतीसा।

आतमा अनादि-रागी परभाव-पागी तातैं,
औदयिक-भाव माहिं नवा भाव धारै है।
ताही भाव-कारनतैं पुग्गल विविधकर्म,
एकमेकरूप होइ बंधन समारै है॥
तातैं राग-दोष-मोह-चिकनाई भावबंध,
कारन निमित्तरूप लोककाज सारै है।
कर्मरूपपुग्गल औ जीवदेस एकमेक,
द्रव्यबंध सोई लसै ग्यानी भेद पारै है॥ १५७॥

दोहा।

पुग्गल-जीव-प्रदेस मिलि, एकमेक इक ठौर।
अनुप्रवेस आपसविषैं, सो है बंधन ठौर॥ १५८॥

अथ बहिरङ्गान्तरङ्गबन्धकारणमाह—गाथा

जोगणिमित्तं गहणं जोगो मणवयणकायसंभूदो।
भावणिमित्तो बंधो भावो रदिरागदोसमोहजुदो॥ ४४॥

दोहा।

करम ग्रहन है जोगकरि, जोग वचन-मन-काय।
भाव-हेतु थितिबंध है, रागादिक उपजाय॥ १५९॥

सवैया इकतीसा ।

काय-वाक-मनोरूप वरगनावलंबी है,
आतम-प्रदेस-पंद जोग नाम कहना ।
तिनका निमित्तपाय कर्मपुंज आवै धाय,
आतम-प्रदेसविषै एकमेक गहना ॥
राग-दोष-मोहरूप जीवभाव-कारनतैं,
थितिका प्रबंध होइ जेताकाल रहना ।
वहिरंग-हेतु जोग अंतरंग जीवभाव,
दौनौंकै पिछानैसेती कर्मपुंज दहनां ॥ १६० ॥

दोहा ।

आपभूलकी भूलतैं, भूला सब संसार ।
भूलिमूल जब लखि परा, तब पाया भवपार ॥ १६१ ॥

अथ मिथ्यात्वादिद्रव्यपर्यायाणामपि बन्धबाहिरङ्गकारणमाह -

गाथा ।

हेदू चदुव्वियप्पो अट्ठवियप्पस्स कारणं भणिदं ।
तेसिं पि य रागादी तेसिमभावे ण वज्झन्ति ॥ ४५ ॥

दोहा ।

अष्ट करम-कारन कहा, हेतु चारि परकार ।
तिन कारन रागादि हैं, इन बिन बंध निवार ॥ १६२ ॥

सवैया इकतीसा ।

आठ कर्म कारन है मिथ्या आदि चारि भेद,
ताका फुनि और हेतु राग आदि जाननां ।

रागादिक भाव विना कर्मबंध होई नाहिं,
मिथ्या आदि उदै हेतु वाहरका मानना ॥
तातैं राग-दोष-मोह अंतरंग कारन है,
निहचैसौं बंध-हेतु इनहीकौं ठानना ।
इनकै अभावसेती मोखका सुभाव सधै,
काळलब्धि आयेसेती इनका पिछानना ॥१६३॥

दोहा ।

आप अंध जव बंध तव, फिरै विविध-गति मंद ।
आप अंध जव है नहीं, तव सूझै निरबंध ॥ १६४ ॥

इति बंधस्वरूपम् ।

अथ मोक्षस्वरूपं व्याख्याति तत्र द्रव्यकर्ममोक्षहेतुपरम-संवररूपेण भावमोक्षस्वरूपं निरूपयति—गाथा ।

हेदुमभावे णियमा जायदि णाणिस्स आसवणिरोधो ।
आसवभावेण विणा जायदि कम्मस्स दु णिरोधो ॥ ४६ ॥

कम्मस्साभावेण य सव्वण्हू सव्वलोगदरसी य ।
पावदि इंदियरहिदं अव्वावाहं सुहमणंतं ॥ ४७ ॥

दोहा ।

आस्रव-हेतु अभावतैं, ग्यानी-आस्रव-रोध ।
आस्रव विन सव करमका, सहजै होइ निरोध ॥ १६५ ॥

कर्म-अभाव सवै भये, सर्वग्यान सवदृष्टि ।
इंद्रियरहित अनंत सुख, अव्यावाध सुदृष्टि ॥ १६६ ॥

सवैया इकतीसा।

संसारी अनादि मोह-कर्म-आवरित ग्यान,
क्रमरूप वर्तमान अविसुद्ध सगरा।
सोई राग-दोष-मोह भावरूप आस्रव है,
ग्यानीकै अभाव भये मिटै मोह झगरा॥
तातैं द्रव्य-आस्रवका आसरा निराला भया,
ग्यान-दृष्टि-आवरन घात कर्म सगरा।
सर्वग्यानी सर्वदर्सी इंद्रियरहित सुद्ध,
अव्याबाध सुख अनंत पावै मोख नगरा॥१६७॥

दोहा।

जीवन-मुगति जुगति विना, कहत अयाने लोक।
भाव मुगतिकी जुगतिसौं, जीवन-मुगति अरोक॥१६८॥
भाव-मुगति कारन भना, दरव-मुगति सो काज।
इंद्रियरहित अनंत थिति, पावै सिवपद राज॥१६९॥

चौपई।

आस्रव-हेतु जीवकै सारे, राग-दोष अरु मोह निरारे।
तिनका लसै अभाव सुहाया, ग्यानी जियकै जैन बताया१७०
तातैं भावास्रव जब भासा, द्रव्यास्रव तव सहज विनासा।
जब कारनका भया निवारा, तब कारजका कौन समारा॥
जबही करन अभाव कहावै, तब केवलपद सहजहि पावै।
जिन सरवग्य सरवदरसी है, सुख अनंत केवल परसी है॥

अव्याबाध अतींद्रिय सारा, सुपर जथावत सकल उजारा।
जीवन-मुगति जुगतिकरि नामी, भाव-मोख कहवति सिवगामी ॥
दरव-मोखका कारन नीका, संवररूप अनुपम जीका।
भाव-मोख यहु वरनन कीना, भेदविग्यान स्व-पर-रसभीना ॥

दोहा।

भेदग्यानसौं मुगति है, जुगति करौ किन कोइ।
वस्तुभेद जानै नहीं, मुगति कहाँसौं होइ ॥ १७५ ॥

अथ द्रव्यकर्ममोक्षहेतुपरमनिर्जराकारणध्यानाख्यानं—गाथा

दंसणणाणसमग्गं ज्झाणं णो अण्णदव्वसंजुत्तं।
जायदि णिज्जरहेदू, सभावसहिदस्स साधुस्स ॥ ४८ ॥

दोहा।

आन दरव संजुगत नहिं, दृष्टि-ग्यान-युत ध्यान।
भावसहित मुनिराजकौं, निर्जर-हेतु बखान ॥ १७६ ॥

सवैया इकतीसा।

भावमुक्त भगवान केवली सरूप तृप्त,
तातैं सुख-दुःख-कर्म-विक्रियाकी समता।
खीन आवरन तातैं ग्यान-दर्सन-समूह,
चेतनामयत्व आन द्रव्य नाहिं गमता ॥
सुद्धरूपविषै अविचलित चेतना तातैं,
ध्यान नाम पावै सदा आपरूप रमता।
पूर्वकर्म-सक्ति नासै निर्जरासरूप भासै,
तातैं द्रव्यमोख पावै, रहै लोक ममता (?) ॥ १७७ ॥

दोहा।

दरवमोखका हेतु है, परम निर्जरा हेतु।
ध्यान नाम तातैं कह्या, पुरषारथ संकेत ॥ १७८ ॥

अथ द्रव्यमोक्षस्वरूपमाह—गाथा।

जो संवरेण जुत्तो णिज्जरमाणोध सव्वकम्माणि।
ववगदावेदउस्सो, मुयदि भवं तेण सो मोक्खो ॥ १४९ ॥

दोहा।

जो संवर-संजुत्त है, सरव करम निजरेइ।
आयु-वेदना-विगत सो, भव तजि मुकति करेइ ॥ १७९ ॥

सवैया इकतीसा।

केवली जिनेसुरकै भावमोख हुए सेती,
आगामी कर्मरोध पुरा कर्म भगरा।
ध्यानकी प्रसिद्धतातैं निर्जरा सहजरूप,
पुरा कर्म संततिका नास होइ सगरा ॥
काहू एक जीवविषै समुद्घात होनेतैं,
आयुमान रहै वेद-नाम-गोत रगरा।
चौदह अजोगी अंत सर्व कर्म अंत होइ,
सिद्धथान पावै जीव मिटै लाग झगरा ॥ १८० ॥

दोहा।

भागरा रगरा मिटि गया; पकरा नगर अनूप।
सगरा उबरा ग्यानपद, अविचल सहजसरूप ॥ १८१ ॥
दरव-मोखकी विधि कही; सिवसिधि साधनहार।
उपादेय सब कथनमैं, ग्यानीविषै त्रिकार ॥ १८२ ॥

मोखनगरकै डगर ए, सम्यक दरसन ग्यान।
नव पद तिनकै सव विषय, पूरन भया वखान॥ १८३॥

इति मोक्षपदार्थ व्याख्यानं समाप्तं समाप्तं च मोक्षमार्गावयवरूपव-
सम्यग्दर्शनज्ञानविषयभूतनवपदार्थव्याख्यानम्।

अथ मोक्षमार्गप्रपञ्चसूचिका चूलिका। आदौ मोक्षमार्गस्वरूप-
माह—गाथा।

जीवसहावं णाणं अप्पडिहददंसणं अणण्णमयं।
चरियं च तेसु णियदं अत्थित्तमाणिंदियं भणियं॥ ५०॥

दोहा।

ग्यान अवरु दरसन अहत, अपृथक जीव सुभाव।
तिनमैं नियत चरित्र है, अस्ति अनिंद कहाव॥१८४॥

सवैया इकतीसा।

सामानि-विसेषरूप चेतनास्वरूप जीव,
ग्यान-दृग दौनौं भेद अजुत विचारना।
इनहीमैं नियत है उतपाद-व्यय-ध्रौव्य,
वृत्तिरूप अस्तिताई राग आदि टारना॥
क्रमतैं अनिंदित है चारित अमंदरूप,
मोख-पंथ नीका लसै आपमैं निहारना॥
याही पंथ मोखपंथी गये हैं गिरंथी कहै,
अव भी जो जाया चाहै ताकौं इहै धारना॥१८५॥

दोहा।

जीव-सुभाव सुभाव-गत, अविचलरूप जो होइ।
रागादिक न्यारा चरन, मोखपंथ है सोइ॥ १८६॥

चौपई।

चारित भेद दोय परकारा, स्वसमय अरु परसमय विथारा।
स्वगत-स्वभाव अवस्था जामैं, अस्तिरूप सो स्वसमय तामैं १८७
परभावावस्था वसथाई, अस्तिरूप परसमय कहाई।
तिन दौनौंमैं जो स्वचरित्री, केवल आतमरूप पवित्री ॥१८८॥
पर-परसंगथका सो न्यारा, चेतनरूप अनूपम धारा।
सोई मोखरूप है साचा, अनुभौ लखै वचन निरवांचा॥१८९॥

दोहा।

स्वसमय ग्यानी जीव है, पर समयाश्रित कूर।
तातैं स्वपर पिछानिए, जो जिनसासन मूर ॥ १९० ॥

सोरठा।

इहै जगतमैं सार, स्वपर-भेद पहिचानिए।
तामैं जाननहार, उपादेय निजरूप है ॥ १९१ ॥

अथ स्वसमय-परसमयोपादान-व्युदासपुरस्सरकर्मक्षयद्वारेण जीवस्वभावनियतचरितस्य मोक्षमार्गत्वद्योतनं—गाथा।

जीवो सहावणियदो अणियदगुणपज्जयोध परसमओ
जदि कुणदि सगं समयं पब्भस्सादि कम्मवंधादो ॥५१ ॥

दोहा।

जीव-सुभाव नियत सदा, अनियत गुन-परजाय।
परसमयाश्रित स्वगततैं, कर्मवंध नसि जाय ॥ १९२ ॥

सवैया इकतीसा।

संसारी जीवौंकै ग्यान-दृग-गुन जो पै तौ पै,
मोहिनी अनादिवस राग-दोष वसता।

तातैं नानारूप भाव गुन-परजायविषैं,
परसमैरूप होइ पररूप लसता ॥
सोई मोह झारि एक सुद्ध उपयोग धारि,
कालजोग पाय आपविषै आप धसता ।
सुद्ध गुन-परजैमैं स्वसमय एकाकी है,
सोई मोखमारगमैं कर्मबंध नसता ॥ १९३ ॥

दोहा ।

काललवधि-बल पायकै, सम्यक-जोति-उद्योत ।
परसमयाश्रित पर लसै, स्वसमय निजपद होत ॥ १९४ ॥

सोरठा ।

स्वसमय निजपद होइ, काललवधि जो पाइए ।
खेद करौ जिन कोई, वस्तु सहज परिनति लसै ॥१९५॥

अथ परचरितप्रवृत्तस्वरूपाख्यानं—गाथा ।

जो परदव्वम्मि सुहं असुहं रागेण कुणादि जादि भावं ।
सो सगचारित्तभट्ठो परचरियचरो हवादि जीवो ॥ ५२ ॥

दोहा ।

आन दरवमैं सुभ असुभ, रागी करै जु भाव ।
स्वकचरित्रकरि भ्रष्ट सो, परचारित्र लखाव ॥ १९६ ॥

सवैया इकतीसा ।

मोहनीय-करमकै उदैवस वरती है,
जीव रज्यमान तातैं परमैं मगनता ।
सुभ औ असुभ भाव दौनौंका करैया लसै,
स्वचरितभ्रष्ट परचारित-लगनता

निज द्रव्यविषै सुद्ध-उपयोग निज सोई,
निज चरित नाम ताकै अपनी जगनता ।
पर द्रव्यविषै राग-रंजित है परचारी,
मिथ्या रूढ़िकारी जौ पै धारी है नगनता॥१९७॥

दोहा ।

स्वचरित अस परचरितकी, जिन लखि जानी वात
तिन आतम आतम लख्या, दरसन-मोह विलात ॥ १९८ ॥

अथ परचरितप्रवृत्तेर्हेतुत्वेन मोक्षमार्गनिषेधः—गाथा ।

आसवदि जेण पुण्णं पावं वा अप्पणोध भावेण ।
सो तेण परचरित्तो हवदित्ति जिणा परूवंति ॥ ५३ ॥

दोहा ।

पुण्य-पाप नित आस्रवै, जा सुभावकरि लोइ ।
ता सुभावकरि जीवकै, परचारितता होइ ॥ १९९ ॥

सवैया इकतीसा ।

जाहीसमै जीवविषै सुभ-उपराग होइ,
ताहीसमै भाव-पुण्य आस्रव कहाई है ।
ऐसैं पाप-उपराग पाप-आस्रव कहावै,
पुण्य-पाप भाव सो तौ जीवमैं रहाई है ॥
ताही भावकरि जीव परचरितधारी है,
तातैं परकी प्रवृत्ति बंधता लहाई है ।
मोखपंथ वाधक है भवरूप साधक है,
ग्यानी जीव जानि जानि आपतैं वहाई है॥२००॥

दोहा।

परचारिततैं जगत है, नानारूप अनादि।
स्वकचरित्र जब आचरन, तब सिव-सुखकी आदि२०१

अथ स्वचरित्रप्रवृत्तस्वरूपाख्यानं—गाथा।

जो सव्वसंगमुक्को णण्णमणो अप्पणं सहावेण।
जाणदि पस्सादि णियदं सो सगचारियं चरदि जीवो॥ ५४॥

दोहा।

सकल संग परिहरन करि, एकपना जो आप।
जानै देखै नियत सो, स्वसमय जीव-प्रताप॥२०२॥

सवैया इकतीसा।

सुद्ध उपयोग जान्या सब संग मैल भान्या,
परूप त्यागी आपरूप एकमनसा।
अपना सुभाव एक दृग-ग्यानरूप ताकौं,
देखै जानै आन और देखै है सुपनसा॥
सोई स्वचरित्र-चारी आपमें विहारी जीव,
तिनही मोख जानेकी कीनी है सुगमता।
तातैं दृग-ग्यानरूप आतमा-सरूप सारा,
चारित सुकीय धारा सुद्ध है गगनसा॥ २०३॥

दोहा।

दरसन-ग्यान सरूपमैं, आपरूप-गत जीव।
सोई स्वचरित जानिए, स्वसमयरूप सदीव॥ २०४॥

अथ शुद्धस्वचरितप्रवृत्तिप्रत्ययप्रतिपादनं—गाथा ।

चरियं चरदि सगं सो जो परदव्वप्पभावरहिदप्पा ।
दंसणणाणवियप्पं अवियप्पं चरदि अप्पादो ॥ ५५ ॥

दोहा ।

स्वचरितकौं जो आचरै, पर आपा नाहिं जास ।
दरसन-ग्यान-विकल्प-गत, अविकल्पी परकास ॥ २०५ ॥

सवैया इकतीसा ।

जाकै भेद-ग्यान जग्या राग-दोष-मोह भग्या,
सगरा सरूप भास्या परकै भगरका,
विवहार-निहचैका रूप आपरूप जान्या,
जामैं भेद निरभेद दौनौंकी कगरका ॥
साधन अभेद साधि जामैं निरुपाधिरूप,
निहचै सरूप भासै अपने डगरका ।
सोई स्वचरिती सुद्ध-पंथका पथिक नीका,
तिनही पयाना कीना मोखकै नगरका ॥ २०६ ॥

दोहा ।

साधन-साधि-विकल्पता, यहु कथनी विवहार ।
निहचै एक अभिन्नता, निरविकलप अविकार ॥ २०७ ॥
निहचै अस विवहारमैं, साधन-साधि विचार
ज्यौं कंचन पाषानमैं, कारज कारन टार ॥ २०८ ॥

सोरठा ।

यातैं श्रीजिनबानि, उभय नयातम अरथमय ।
करै करमकी हानि, तीरथकी परवरतना ॥ २०९ ॥

अथ निश्चयमोक्षमार्गसाधनभावेन पूर्वोद्दिष्टव्यवहारमोक्षमार्गस्वरूपमाह—गाथा

धम्मादी सद्दहणं सम्मत्तं णाणमंगपुव्वगदं।
चिट्ठा तवम्मि चरिया ववहारो मोक्खमग्गोत्ति ॥ ५६ ॥

दोहा।

धर्मादिकमैं सुरुचि सो, सम्यक श्रुत-गत ग्यान।
तपमैं चरजा चरित है, विवहारी सिव जान ॥ २१० ॥

सवैया इकतीसा।

छहौं द्रव्य नवौं पद-विषै श्रद्धा प्रीति रुचि,
आपनी सुमुख होइ सम्यक लखावना।
तत्वौंकी प्रतीतिविषै रीति न्यारी न्यारी लसै,
सोई नाम ग्यान नाना रसका चखावना।
परतैं विमुख आपाविषै जो चरित नाम,
नाना तपधारी मोहचारित नसावना।
एई तीनौं विवहार निहचै-सरूप साधै,
विवहार मोख माहिं इनका रखावना ॥ २११ ॥

दोहा।

ए साधन निजरूपकै, परम अनूपम जान।
जब निजरूप जग्या विमल, तब इन कहा कहान ॥२१२॥

सोरठा।

साधन-साधि-अभाव, सुद्ध सरूपविषै लसै।
तरली दसा लखाव, भेद-ग्यान बहु भाँतिका ॥ २१३ ॥

अथ व्यवहारमोक्षमार्गसाध्यनिश्चयमोक्षमार्गस्वरूपमाह—

गाथा।

णिच्चयणयेण भणिदो तिहि तेहिं समाहिदो हु जो अप्पा।
ण कुणदि किंचि वि अण्णं ण मुयदि सो मोक्खमग्गोत्ति ॥ ५७ ॥

दोहा।

निहचैनयकरि कथन यौं, तीनौं एक समाज।
जीव और कछु नहिं करै, मोखपंथ इक काज ॥ २१४ ॥

सवैया इकतीसा।

जगमैं अनादि मिथ्या-वासना विनासकरि,
विवहार मोखपंथ नीकै जीव लखै है।
दृग-ग्यान-चारितमैं त्याग उपादान भेद,
आपरूप धारनातैं भेदभाव नखै है ॥
अंग-अंगी-भाव एक गई है जुदाव टेक,
आप माहिं निःप्रकंप सुद्धरूप रखै है,
सोई है निहचैरूप मोख-मारगसरूप,
अव्यय अनंत सुख सदाकाल चखै है ॥ २१५ ॥

दोहा।

दरसन-ग्यान-चरित्र सम, आतम एक सुभाव।
नियतरूप सो मुकत है, निहचै जैन लखाव ॥ २१६ ॥
निहचै अरु विवहारकरि, मोखपंथ दुय भेद।
साधन साध्य सधावतैं, बधै बहुत परिछेद ॥ २१७ ॥

अथात्मनश्चारित्रज्ञानदर्शनत्वद्योतनं— गाथा।

जो चरदि णादि पिच्छदि अप्पाणं अप्पणा अणण्णमयं।
सो चारित्तं णाणं दंसणमिदि णिच्चिदो होदि ॥ ५८ ॥

दोहा।

देखै जानै अनुचरै, जो आपनकौं आप।
सो दृग-ग्यान-चरित्र-पद, निहचै पर न मिलाप ॥ २१८ ॥

सवैया इकतीसा।

आप माहिं आपरूप पर माहिं पर तातैं,
ग्यानी आप माहिं चरै आपरूप जानिकै।
स्व-पर-प्रकास-पुंज अपना सरूप जानै,
आपरूप जैसा तैसा देखै आप मानिकै ॥
तातैं है चरित आप ग्यान–दृग औ मिलाप,
कर्त्ता-कर्म-कारनकी पद्धति पिछानिकै।
भेदभाव त्यागि निरभेद-सुधा पानकरि,
सुद्ध मोखपंथी होइ कर्मपुंज भानिकै ॥ २१९ ॥

दोहा।

दरसनमैं दरसन लसै, ग्यान माहिं फुनि ग्यान।
चारितमैं चारित भला, तीनौं समरस मान ॥ २२० ॥

सोरठा।

तीनौं समरस मान, जुदे जुदे कहवति फलै।
भेद अभेद वखान, मोखपंथ साधन भलै ॥ २२१ ॥

अथ सर्वस्यात्मनः संसारिणो मोक्षमार्गार्हत्वनिरासः—गाथा।

जेण विजाणदि सव्वं पेच्छदि सो तेण सोक्खमणुहवदि।
इदि तं जाणदि भविओ अभव्वसत्तो ण सद्दहदि ॥ ५९ ॥

दोहा ।

देखै जानै जिसहिकरि, तिसहीकरि सुख होइ ।
भव्य माहिं यहु आचरन, नहिं अभव्य महिं सोइ ॥ २२२ ॥

सवैया इकतीसा ।

याही आतमाकै विषै दृग-ग्यान-सुभाव तामैं,
विषय-अभिलाषताका पडिकूल है ।
मोख माहिं जीव तातैं देखै जानै है सदीव,
तामैं विषैका अभाव सोई हेतु मूल है ॥
तहीं है अनाकुलता-लच्छन सुभाव-सुख,
ताकी अनुभूति मोखमंदिरमैं फूल है ।
ऐसी अनुभूति भव्य माहिं अनुभूति होइ,
सदा ही अभव्य माहिं सुद्धभाव भूक है, ॥२२३॥

दोहा ।

मोख जाइवे जोग है, भव्य जीव निरधार ।
नहिं अभव्य सिवमग लहै, जतन करौ अनिवार ॥२२४॥

सोरठा ।

यातैं कछु इक जीव, मोख जाइवे जोग हैं ।
जग भी रहैं सदीव, सबै जीव सिव क्यो गमैं ॥ २२५ ॥

अथ दर्शनज्ञानचारित्राणां कथञ्चिद्बन्धहेतुत्वोपदर्शनेन जीव-स्वभावनियतचरितस्य साक्षान्मोक्षहेतुत्वोद्योतनं—गाथा ।

दंसणणाणचरित्ता-णि मोक्खमग्गोत्ति सेविदव्वाम्मि ।
साधूहिं इदं भणिदं तेहिं दु बंधो व मोक्खो वा ॥ १६० ॥

दोहा।

दरसन-ग्यान-चरित्र ए, मारग सिवके सेय।
साधूजन यौं कहत हैं, बंध-मोख-विधि एय ॥२२६॥

सवैया इकतीसा।

एई दृग-ग्यान चारु चारित त्रिकार जानि,
परकै मिलापसेती बंधन गरट है।
अपने सुभाव जब होहिं तीनौं एकरूप,
स्वसमै कहावै तब मोखरूप वट है ॥
जैसैं अग्नि-जोग घीव दाहकसरूप होइ,
अग्नि-जोग मिटैसेती सीतता सुघट है।
तैसैं स्वचरित्री जीव आपतैं पवित्री होइ,
सुद्ध मोख-मारगमैं सबही सुलट है ॥ २२७ ॥

दोहा।

मोखपंथके पथिककौं, सिवपदार्थ पाथेय।
दरसन-ग्यान-चरित्र-पद, और सकल पद हेय॥२२८॥

अथ सूक्ष्मपरसमयस्वरूपमाह—गाथा।

अण्णाणादो णाणी जदि मण्णदि सुद्धसंपओगादो।
हवादित्ति दुःखमोक्खं परसमयरदो हवदि जीवो ॥ ६१ ॥

दोहा।

ग्यानी जब अग्यानतैं, मानै करम विमोख।
सुद्धपयोग-परंपरा, परसमयाश्रित थोख ॥ २२९ ॥

सवैया इकतीसा ।

भविकर (?) सुद्ध आप भावना सुकीय सुद्ध,
संयम अभावसमै सुद्ध ग्यान तजता ।
क्रोध आदिक असुद्ध परिनाम वारनेका,
भवभाव छेदिवैका कारन उपजता ॥
अरिहंत आदि पंच परमेष्ठिविषै भक्ति,
काय-वाच-मनसेती एकरूप भजता ।
सो भी राग-बलसेती परसमै धारी जीव,
परंपरा मोख पावै करै देव जजता ॥ २३० ॥
आपतैं विमुख होइ ग्यानीजीव जाहीसमै,
ताहीसमै कछु एक आलंबन चाहै है ।
जातैं विषै उपजनि औ क्रोधादिक वढ़नि,
दौनौंका विनास होइ कर्मपुंज दाहै है ॥
जिन आदि पंच गुरु उरमैं विचार करै,
तिनहीकी भगतिमैं प्रीति निरवाहै है ।
सुद्ध संभयोगधारी सूछिम परसमैतैं,
परंपरा जीव सुद्ध मोख अवगाहै है ॥ २३१ ॥

दोहा ।

ग्यानी सुद्ध-सुभाव-युत,परसमयाश्रित सोइ ।
सूच्छिम-राग-प्रभावतैं, तदभव मुकत न होइ ॥ २३२॥

सोरठा ।

सुगति-विरोधक राग, सबै विरागी जन कहैं ।
तातैं पहिलहिं त्याग, राग-विरोध-विमोह-मल ॥२३३॥

अथोक्तशुद्धसंप्रयोगस्य कथञ्चिद्बन्धहेतुत्वेन मोक्षमार्गनिरासः—

गाथा ।

अरहंतसिद्धचेदियपवयणगणणाणभत्तिसंपण्णो ।
बंधदि पुण्णं बहुसो ण दु सो कम्मक्खयं कुणादि ॥ ६२ ॥

जिन-सिध-चैत्य-सुपरवचन, संघ-ग्यान इन प्रीति ।
पुण्य-करमका बंध बहु, करमनास नहिं रीति ॥ २३४ ॥

सवैया इकतीसा ।

देव-गुरु-ग्रंथविषै भक्ति धर्मानुराग,
सुद्ध संप्रयोग सोई ग्यानीविषै तोषना ।
राग-अंस जीवै तातैं सुभ उपयोग भूप,
भूमिका प्रसिद्ध तातैं पुण्यबंध पोषना ॥
बंधकी प्रनाली लसै करमकी सत्ता बसै,
विद्यमान मोख नाहीं कर्मरूप सोषना ।
तातैं रागरूप कनी ग्यानी जहाँ तहाँ हनी,
ऐसी जिनराज भनी साची भाँति घोषना॥२३५॥

दोहा ।

राग-कनी जौलौं रहै, तौलौं मुकति न होइ ।
वीतराग तातैं कह्या, सिवअधिकारी जोइ ॥ २३६ ॥

सोरठा ।

सिवअधिकारी जोइ, वीतराग-पद जगतमैं ।
रागी मुकत न होइ, रागरूप परजोग है ॥ २३७ ॥

अथ स्वसमयोपलम्भाभावस्य रागैकहेतुत्वोद्योतनं—गाथा ।

जस्स हिदयेणुमत्तं वा परदव्वम्मि विज्जदे रागो ।
सो ण विजाणदि समयं सगस्स सव्वागमधरो वि ॥ [illegible] ॥

दोहा ।

अनुमात्र पर-दरवमैं, राग जास किन होइ ।
सो नहिं जानै सुअ-समै, आगम सरव विलोइ ॥ २३८ ॥

सवैया इकतीसा ।

जाकै राग-रेनुकनी जीवै है हिरदै माहिं,
आपतैं विमुख कछू वाहिरकौं चगै है ।
सबही सिद्धांत-सिंधु-पारगामी यद्यपि है,
तथापि सरूपविषै मैल-भाव जगै है ॥
तातैं जिन आदिविषै धरमानुराग-कनी,
सुद्ध मोख-मारगमैं साधकसी लगै है ।
मोखकै सधैया तातैं वीतराग जीव कहे,
जगकै बधैया माहिं राग-दोष पगै है ॥ २३९ ॥

दोहा ।

जहाँ रागकनिका रहै, तहाँ न जीव विराग ।
वीतराग तातैं मुकत, सकल राग परत्याग ॥ २४० ॥

सोरठा।

सकल राग परत्याग, वीतरागपदमैं लसै ।
तातैं मुगत विराग, वीतराग-वानीविषै ॥ २४१ ॥

अथ रागलवमूलदोषपरम्परामाह—गाथा।

धरिदुं जस्स ण सक्कं चित्तुब्भामं विणा दु अप्पाणं ।
रोधो तस्स ण विज्जदि सुहासुहकदस्स कम्मस्स ॥ ६४ ॥

दोहा।

जाकै आतमग्यान बिन, चितकी होइ न रोक।
ता आतमकै क्यौं मिटै, पुण्यपापकी धोक ॥ २४२ ॥

सवैया इकतीसा।

पंच परमेसुरकी भगति धरम-राग,
तातैं मनका पसार नानारूप पसरै ।
तातैं सुभअसुभ है करमका परवार,
आतमीक धरमका सारा रूप खसरै ॥
तातैं रागकनिका भी बंधनका मूल लसै,
मोखका विरोधक है पररूप भसरै ।
मोखरूप साधकके बाधक है राग-दोष,
जिनराजवानी जानै रागदोष विसरै ॥ २४३ ॥

दोहा।

रागकनी तातैं कही, सब अनर्थका मूल ।
परमैं प्रीति बढ़ायकै, करै आतमा भूल ॥ २४४ ॥

अथ रागकलिनिःशेषीकरणस्य करणीयत्वाख्यानं—गाथा ।

तह्मा णिव्वुदिकामो णिस्संगो णिम्ममो य हविय पुण्णो ।
सिद्धेसु कुणदि भत्तिं णिव्वाणं तेण पप्पोदि ॥ ६५ ॥

दोहा ।

तातैं निर्वृत्तिकामकै, ममता संग न कोइ ।
सिद्ध भगति इक चित करै, निर्वृति पावै सोइ ॥ २४५ ॥

सवैया इकतीसा ।

रागादिक वरतना चित्त उद्भ्रांत करै,
चित्तकी विकलतामैं नाना कर्म वँधै है ।
तातैं मोखअरथीकै वंधमूल चित्तभ्रांति,
ताका मूल रागकनी ताका अंत सधै है ॥
राग अंत भये सिद्ध-भगतिकी प्रीति बढ़ी,
निरसंग निर्ममत्व आपरूप खंधै है ।
सोई स्वसमय परसिद्ध रिद्धि-पूरन है,
सर्व कर्म अंत करै सिद्धौंकौं निवंधै है ॥२४६॥

दोहा ।

तातैं रागकनी कही, रही न नीकी नैक ।
निरममत्व निरसंग पद, अलख निरंजन एक ॥२४७॥

अथार्हदादिभक्तिरूपपरसमयप्रवृत्तेः साक्षान्मोक्षहेतुत्वाभावेपि परम्परया मोक्षहेतुत्वसद्भावद्योतनं—गाथा ।

सपयत्थं तित्थयरं अभिगदबुद्धिस्स सुत्तरोइस्स ।
दूरतरं णिव्वाणं संजमतवसंपओ तस्स ॥ ६६ ॥

दोहा।

नव-पदजुत जिन नमत जो, सूत्रविषै रुचिवंत।
संयम-तप-व्रतवंतकौं, सिवपद दूर हवंत ॥ २४८ ॥

सवैया इकतीसा।

निकट संसार आवै जीव मोख-सुख धावै,
संयमतपस्या भार भारी भारवाही है।
परम वैराग्य धारै आप प्रभुता संभारै,
आपतैं उतरिकै पै पररूप गाही है ॥
ताकै पंच गुरू प्रीति परसमै रीति सारी,
न्यारी करि सकै नाहिं प्रीति निरवाही है।
विद्यमान मोख नाहिं, परकी प्रतीत माहिं,
परंपरा मोख पावै जिनने कहाही है ॥ २४९ ॥

दोहा।

सूच्छिम परसमयी पुरुष, मुकत न है ततकाल।
सुरग आदि सुख भुगतकरि, क्रमकरि सिवसुख लाभ ॥२५०॥

अथार्हदादिभक्तिमात्ररागजनितसाक्षान्मोक्षस्यान्तरायद्योतनं-

गाथा।

अरहंतसिद्धचेदियपवयणभत्तो परेण णियमेण।
जो कुणदि तवो कम्मं सो सुरलोगं समादियदि ॥ ६७ ॥

दोहा।

जिन-सिध-चैत्य-सुपरवचन,-भगति करै मन लाय।
संयम-तपधारी पुरुष, सो सुरलोकहिं जाय ॥ २५१ ॥

सवैया इकतीसा ।

जाकै चितविषै अर-हंतकी भगति लसै,
सिद्धका सरूप लसै चैत्यबिंब नमना ।
जिनबानीका सरूप निज हियमैं अनूप—
जाकै उपादान सुद्ध अंतरंग रमना ॥
नाना तप तपैं औ निदान बिना क्रिया करै,
सम्यकसरूप दृष्टि मिथ्यामोह वमना ।
परकै प्रसंगसेती मोख नाहिं विद्यमान,
सुरगादि सुख पावै रहै लोक-भमना ॥ २५२ ॥

दोहा ।

देव-ग्रंथ-गुरु-भगतितैं, पुण्य-कलपतरु-साख ।
सुरगादिक सुख विविध फल, फलै सकल अभिलाख ॥

अथ साक्षान्मोक्षमार्गसारसूचनद्वारेण शास्त्रतात्पर्योपसंहारः–गाथा ।

तह्मा णिव्वुदिकामो, रागं सव्वत्थ कुणादि मा किंचि ।
सो तेण वीदरागो भविओ भवसायरं तरादि ॥ ६८ ॥

दोहा ।

तातैं निर्वृतिकामकै, सर्व रागपरिहार ।
वीतरागता लहि भविक, उतरै भवनिधि-पार ॥२५४॥

सवैया इकतीसा ।

जैसैं एक चंदनकै वृक्षविषै आगि लगै,
चंदनकौं जारै जो पै चंदन भी सीत है ।
तैसैं धरमानुराग देवलोक-सुख देय,
सो भी सुग्यानीविषै अंतदाह गीत है ॥

ऐसैं ग्यानी जानत है मोखरूप मानत है,
सवै राग त्याग करै रागसौं अतीत है।
दुःखरासि सुखाभास भवका समुद्र तरै,
सुद्ध ग्यान-सागरमैं सदाकाल नीत है, ॥२५५॥

दोहा।

जो साक्षातपने कहा, मोखपंथ निरवाहि।
वीतराग-पद एक सो, नमत भविकजन ताहि ॥२५६॥
बहुत बोलतैं वहुत है, सकल ग्रंथका सार।
वीतराग-पदका लखन, वीतरागतैं धार ॥२५७॥

चौपई।

अव कहियत कछु ग्रंथ विछोरा, तातपरज सवमैं जो थोरा।
तातपरज सो दुय परकारा, ग्रंथरूप अरु सूत्र समारा॥२५८॥
इनमैं तातपरज जो दूजा, सो गाथा गाथा प्रति पूजा।
इहाँ सूत्र गाथाकौं कहिए, तातपरज न्यारा तहँ लहिए॥२५९॥
पहला तातपरज अव सुनना, ग्रंथ नाम नीकै करि मुनना।
पंचासतिकाया यहु सगरा, सवद-ब्रह्म परमातम डगरा २६०
इसमैं पुरुषारथ सिवकारन, पंच अस्तिकाया सुविचारन।
छहौं दरवका सरव विथारा, इसमैं कह्या निरूपन सारा॥२६१॥
नवौं पदारथ रचना कीनी, वंध-मोख-मारग-रसभीनी।
तामैं निहचै अरु विवहारा, मुख्य गौन मारग निरवारा॥२६२॥
वीतराग-पद सगरे सो है, उपादेय मुनिजन-मन मोहै।
सोई तातपरज है सारे, अस्तिकायकै कथन विचारे॥२६३॥

दोहा ।

वीतरागपद सार है, सकल जतन करि सोध ।
निहचै अरु विवहारमैं, जैसैं ह्वै न विरोध ॥ २६४ ॥

सोरठा ।

जैसैं ह्वै न विरोध, तैसैं साधक साधिए ।
मिटै करम-अवरोध, साधिरूप आपै लसै ॥ २६५ ॥
जो उपज्यौ अभिलाष, सकल अरथ पूरन-करन ।
तौ आतम-रस चाख, निहचै अरु विवहारमैं ॥२६६॥

दोहा ।

ए दौनौं तीरथ भलै, निहचै अरु विवहार ।
आपरूप अवगाहतैं, पावै भव-निरधार ॥ २६७ ॥

चौपई ।

प्रथम तीर्थ विवहार सुहाया, जामैं भेद-कथन मन भाया ।
साधन-साधि भावकरि न्यारे, भेद-कथन संबंध विचारे ॥२६८॥
तैसैं सगरा वरनन करिए, अमृतचंद जैसैं उर धरिए ।
भेद्य-भेद-भेदक-पद सगरे, विवहारी तीरथकै झगरे ॥ २६९ ॥
श्रद्धा अरु श्रद्धेय करावै, श्रद्धाता श्रद्धान जतावै ।
ग्येय अग्येय ग्यान अरु ग्याता, चरित चरन चरनीय विख्याता ॥
करता अरु करिनीय करम है, सकल भेद विवहार धरम है ।
विवहारी इनकौं विवहरई, मोहपंथ क्रम क्रम परिहरई ॥२७१॥
कबही मदप्रमाद-वस होई, सिथलभाव आपनमैं जोई ।
ताकौं दंडनीति सब चाहै, प्रायश्चित्त भेद अवगाहै ॥ २७२ ॥

फुनि विवहारी सुन विवहरना, दरसन-ग्यान-चरन अनुचरना ।
बारबार यहु साधन भावै, साधन साधि आपमैं पावै ॥२७३॥
जैसैं रजकसिलापर सखरा, कपरा धोवत क्रम क्रम निखरा ।
त्यौंही भावन भावत भारी, आतम विमल होइ संसारी।२७४।
ज्यौं ज्यौं आतम निरमल होवै, त्यौं त्यौं निहचै नयमल खोवै।
साधन साधि भावना दौनौं, मिलि मिलायकरि एकै होनौं२७५
दरसन-ग्यान-चरनमय आपा, निस्तरंग चेतना मिलापा ।
सब आनंदकन्द भगवाना, चेतन ग्यान चेतना बाना ॥२७६॥
याही क्रम समरस भावना, क्रम क्रम पूरन निजभावना ।
वीतरागपद केवल पाया, मोखरूप आतम ठहराया॥ २७७ ॥

दोहा ।

यहु विवहार कथन भला, निहचैनयसा पेख ।
कालयोग ग्यानी पुरुष, पावै प्रगट अलेख ॥ २७८ ॥

सोरठा ।

पावै प्रगट अलेख, निहचै अरु विवहारमैं ।
जानै सकल विसेख, निरपेखक मानै नहीं ॥ २७९ ॥

चौपई ।

अब सुनि जो केवल विवहारी, निहचै-निरपेखक संसारी।
भिन्न साधि-साधनकौं भावै, सबै समझमैं खेद चढ़ावै ॥२८०॥
दरवौंविषै करै सरधाना, बाहिर सुखी जगतका राना ।
सबै पुरान पुरातन सुनिए, आपन पर कछु मरम न गुनिए २८१

क्रियाकांडमैं मग नित डोलै, ग्यानकांड दरबार न खोलै।
कबहूँ कछु रोचकता आवै, कबहूँ कछु विकलप उपजावै॥२८२॥
कबहूँ कछु आचरन विचारी, वस्तुग्यान विन बहकनि भारी।
आपविमुख दरसन आचरई, जतन साधना आपा करई॥२८३॥
कवही उपसम धरि उपसमना, कवही लोक-सरीर-विरमना।
कवही अनुकंपा अवधारै, कवही अस्तिवाद निरवारै॥ २८४॥

दोहा।

संका कंखा दूरि करि, निरविचिकित अस मूढ़।
उपगूहन थितिकरन ए, वतसल भावन रूढ़॥ २८५॥

चौपई।

आठ अंगकरि समकित सो है, वाहिररूप लोक मन मोहै।
अव सुनि ग्यानरूप आचरना, आप ग्यान बिन बहकत फिरना॥
पठन पाठका काल सँभारै, विनयवंत उपधान सँभारै।
बहुत मानकरि आगम मानै, कपट-भाव परिहरना जानै॥२८७॥
व्यंजन अरथ दोउ सम लीनौ, ग्यान-अंग-साधन-रस भीनौ।
आठ अंग ए ग्यान कहाए, विवहारी विवहार दिखाए॥ २८८॥
चारित आचरना अव सुनना, पंचमहाव्रत विधिकरि मुनना।
गुपति तीन अरु पाँचौं समिती, द्वादस विधि नयभावै विमती२८९
निज वीरज आचरन चरावै, क्रियाकांड उद्यम दिखरावै।
करमचेतना परबल जाकै, सुपरविवेक न आवै ताकै॥ २९०॥
ग्यानचेतना नैंक न जानै, पुण्यरूप आपनकौं मानै।
सुरगादिक च्यारौं गति भमना, निजसरूपका कारि रवमना २९१

सब संसार-मूल दिखलाया, निहचै विन विवहार कहाया।
विवहारी विवहारै अटकै, निहचै विन सगरा जग भटकै २९२

दोहा।

क्रियाकांड करनी करै, करी जहाँलगि जाय।
वस्तुरूप समझै नहीं, कहे कौन समझाय॥ २९३॥

सोरठा।

कहे कौन समझाय, वस्तु सकल असहाय है।
जाकै चित न सुहाय, सो कैसैंकरि समझि है॥२९४॥

चौपई।

अब जे केवल निहचै धारैं, सब विवहार-वासना झारैं।
ते सब क्रियाकांडतैं विरतैं, अर्धनिर्मीलित लोचन निरतैं॥२९५॥
कलपित-बुद्धि हियेमैं आनैं, निरविकलप आपनकौं मानैं।
साधन-साधि-भावना न्यारी, लोकरूढ़ि कहवति सब झारी२९६
साधन-साधि विना कबु गावैं, वस्तुतत्वका मरम न पावैं।
मद-प्रमाद-मदिरा-रस माते, विषय-कषाय-खार-रस राते॥२९७॥
मुरछित कैसी विकल दसा है, सोवत ज्यौं बे-खबर लसा है।
मनकै भ्रमतैं भ्रमते डोलैं, मोह-मगन-ममता झकझोलैं॥ २९८॥
मुँदी चेतना चेतन केरी, ज्यौं तरवरपर जड़ता गेरी।
पुण्य-करमचेतना विसारी, ग्यानचेतना चित न विचारी२९९
एक करमफल-चेतन कहना, अंध अंधमारगमैं रहना।
केवल पापबंधकै करता, ते जगजीव जगतकै धरता। ३००॥

दोहा ।

निहचै कहवतिकरि कहे, निहचै लखै न भेद ।
निरउद्यम आलसमती, करै आतमा छेद ॥ ३०१ ॥

सोरठा ।

करै आतमाछेद, जो केवल निहचै लखै ।
धरै वहुत परिछेद, आपा-पर न पिछानई ॥ ३०२ ॥

चौपई ।

अव सुनि जिन भवथिति निकटाई, तिनकी कथा सकल सुखदाई
भ्रमन अनादिकाल चल आये, ज्यौं कछु अपर लोक वहकाये ॥
काललवधि-वल वधता पाई, मोखनगरका चलन सुहाई ।
निहचै अरु विवहार सुहाए, एकमेक मारग लखि पाए॥३०४॥
दौनौंकै मधिवरती आपा, सुद्धचेतना-परिमित मापा ।
सकल प्रमाद-क्रिया परिहारी, उदासीनता ऊपर धारी ॥३०५॥
आपन माहिं आपकरि आपै, चेतै यथासकति-परितापै ।
नित्य काल उपयोगी एकै, करमरूप परिनतिकौं छेकै॥३०६॥
निरपरमाद कंप नहिं कोई, करम करमफलरूप न होई ।
ग्यानचेतना एकै दिखिए, परमातम आतमपद लिखिए॥३०७॥
याही विधि भवसागर तरिकै, मोखनगर-सुख पावै भरिकै ।
सवदब्रह्म फल इतना वोलै, ग्यानी विषै सहज सो तोलै ३०८

दोहा ।

सबदब्रह्म यहु सवद है, परमिलाप-मलरूप ।
आप सुद्ध चेतनपना, लसै सब्रदमैं भूप ॥ ३०९ ॥

सोरठा।

लसै सबदमैं भूप, अरथरूप जाननपना।
जिन जान्या यहु रूप, तिन जान्या सब जगतकौं ॥३१०॥

अथ कर्त्तुः प्रतिज्ञानिर्व्यूढिसूचिका समापना—गाथा।

मग्गप्पभावणट्ठं पवयणभत्तिप्पचोदिदेण मया।
भणियं पवयणसारं पंचत्थियसंगहं सुत्तं ॥ ६९ ॥

दोहा।

मारग-परभावन निमित, प्रवचन-भगति-विनोद।
अस्तिकाय-संग्रह कथन, प्रवचनसूत्र प्रमोद ॥ ३११ ॥

सवैया इकतीसा।

परम वैराग्यकारी आग्या जिनराजकेरी,
आप माहिं जानी और उपदेस दीना है।
परमरूप आगम-अनुराग-वेग वध्या,
तातैं वाक्यरचना यौं पूरा ग्रंथ कीना है॥
वस्तुतत्व-सूचकतैं द्वादसांगवानी-सार,
पंचासतिकाया नाम संग्रह नवीना है।
सम्यक कारन है दोषका निवारन है,
कुंदकुंदाचारजने आपा सोध लीना है ॥ ३१२ ॥

दोहा।

कुंदकुंद मुनिराजकी, भई प्रतिग्या पूर।
कहना था सो सब कहा, जो जिनसासन मूर॥३१३॥

सोरठा।

जो जिनसासन मूर, समय नाम अधिकार है।
ताका सब अवचूर, जथाथान वरनन कहा ॥ ३१४ ॥

कुंडलिया।

गाथाकरि वरनन किया, अस्तिकायका भेद।
सकल जगत इनका वसै, ए जगसौं निरभेद ॥
ए जगसौं निरभेद, खेद कौ यामैं नाहीं।
नानारूप अनूप, लोक दिखियत इन माहीं ॥
गुन-परजैसौं भरे धरै, मुनिजन-गन साथा।
कुंदकुंद मुनिराय, किया वरनन करि गाथा ॥ ३१५ ॥

दोहा।

अब यातैं आगैं अधिक, कहत 'हीर' कछु और।
कुंदकुंदमुनि सब कहा, पर कछु कहवति ठौर ॥ ३१६ ॥

सोरठा।

पर कछु कहवति ठौर, कुंदकुंदकै कथनमैं।
गुन-परजाय-निचौर, सरव दरवमैं लसतु है ॥ ३१७ ॥

दोहा।

सरव दरवमैं लसतु है, गुन-परजाय-सुभाव।
पै तथापि न्यारा विकत, वरनन सुहित वढ़ाव ॥ ३१८ ॥
मोखनगरकै पथिककौं, निपट निकट यहु पंथ।
गुन-परजैकरि दरव सब, जिनवानी-रसमंथ ॥ ३१९ ॥

सोरठा।

जिनवानी-रस-मंथ, स्व-पर भेद पहिचानिए।
कहैं पुरातन ग्रंथ, जानपना निज मुकत है॥ ३२०॥

कुंडलिया।

जानपना निज मुकत है, जानि सकै तौ जानि।
जानपना जान्या नहीं, तौ वहका भ्रम मानि॥
तौ वहका भ्रम मानि, रिजुमैं सरप समाना।
थाणुरूपकौं पुरुष, सीपकौं रजत पिछाना॥
काललबधि-बल पाय, आप जिन समझा अपना।
तब सब भ्रम मिटि गया, मुकत निज है ग्यानपना ३२१

सवैया तेईसा।

जे ते भये सब सिद्ध सिवालैमैं, ते ते सवै निजरूपकै जानैं।
और जु होहिं हैं होहिंगे आगै पै, तेऊ सवै निजरूप पिछानैं॥
तातैं ब जानपना निज जानिए, आनकौं हेय हिये महि आनैं।
भेदविग्यान सु आप रु आन है, तातैं ए द्रव्य बखान प्रमानैं॥

अथ द्रव्यगुनपर्यायस्वरूप लिख्यते।

छप्पय छंद।

जगत माहिं परिभमत, भमत जब जग निकटाया
तब घातक सब घात, सुद्ध केवल गुन पाया॥
लोकालोक-विकास-भास, षट दरव निरारे।
गुन-परजैजुत लखै, लखन-लखियत जे सारे॥

दृग-बोध-चरन गुन-विमलमय, परमातम आतम सुरस ।
सब लोकपूजि-पूजित-चरन, जय जय जिनपारस परस॥३२३॥

दोहा ।

स्व-पररूप उपकारलगि, परमातम आराधि ।
गुन-परजैजुत दरवकौं, कहत यथामति साधि ॥३२४॥

सोरठा ।

कहत यथामति साधि, दरवरूप सब जगतमैं ।
मिथ्यामत आराधि, मिथ्यामति औरहिं कहे ॥ ३२५ ॥

सवैया तेईसा ।

केई कहैं कोऊ एक है नाथ, सबै नरसाथकै काज समारै ।
केई कहैं कोउ दूसरौ नाहिं न, ब्रह्मस्वरूप विराजत सारै ॥
केई कहैं सब नासनिरूप, दिवा निसि देखि व हीर विचारै ।
जैन अनेक सरूपक वस्तु, सदा जग मध्य विवाद निवारै३२६

सवैया इकतीसा ।

द्रव्य-खेत-काल-भाव च्यारौं भेद जामैं वसै,
सोई वस्तु नाम सदा सहज लखावसौं ।
गुन-परजाय भाय उपजाय विनसाय,
थिररूप उपमित दरव कहावसौं ॥
सब जगरूप छह दरवसरूप भूप,
सब असहाय कोऊ नाहिं न सहावसौं ।
पाँच जड़रूप एक चेतन सुजान जान,
सबै जग पूंजिदृग-ग्यानकै बढ़ावसौं ॥ ३२७ ॥

दोहा ।

जीव-अजीव कहे दरव, पाँच अजीव-विकार ।
पुग्गल-धर्म-अधर्म-नभ,-कालसहित अनिवार ॥ ३२८ ॥

कुंडलिया ।

एई षटदरवी जगत, जगमगात अभिराम ।
पाँच अचेतन जड़ लसै, जीव चेतनाधाम ॥
जीव चेतनाधाम, आपपर सबकौं जानै ।
और अचेतन पाँच, आप-पर कछु न पिछानै ॥
दोनौं रासि अखूट, टूट नहीं कबही केई ।
लसै जगत इनरूप, सदा षटदरवी एई ॥ ३२९ ॥

चौपई ।

छहौं परबका अनुभौ करिए, यथाभेद आगम उर धरिए ।
एकएकमैं भेद सुहाए, तीन तीन मुनिजन मन भाए ॥३३०॥
छहौं दरवके भेद अठारा, आगम-अनुभौ अगम अपारा ।
जब जिय काललबधि निकटावै, तब ए भेद सुनत ही पावै ॥
जबलगि काललबधि नहीं आवै, तबलगि याहि कौन समझावै ।
तातैं अब सुनि विधि सामाना, आतमरुचिकरि नीकै ग्याना ॥

द्रव्य-गुन-परजय सामान्य स्वरूप ।

चौपई ।

दरव अवरु गुनपरजै नामा, सकल अरथ महिं विधि अभिरामा
दरव नाम सामानि कहावै, वस्तुरूप सत्ता जु रहावै ॥३३३॥
पाछै था अब है अरु आगै, एकरूप अविनासी लागै ।
जैसैं घट-घटत्वका कहना, घट विनसै घटत्व-पद रहना ३३४

गुनपरजैका आश्रय कहिए, दरव नाम सब सकति निवहिए।
अब सुनि गुनकी गुनना कीजै, जातैं दरवरूप लखि लीजै ३३५

दरवविकत्तिका न्यारा करना, गुनविसेष यातैं अवतरना।
अयुतरूप सहभावी नित है, दरवभेदका सगरा वित है॥ ३३६॥

परजै दरव प्रणतिका नामा, सगरे परिनति अभिरामा(?)।
क्रमवरती नाना परकारा, कादाचित कुरूप अवधारा॥३३७॥

सो परजाय दुविधिविध वाचा, दरवरूप गुनरूपक साचा।
समय मानकरि सूच्छिम होई, थूल वहुत विध देखिय सोई॥

दोहा।

गुन-परजै-जुत दरवकै, दिखियत नाना रूप।
सम्यकदृगसौं लखि सकै, वस्तु यथावत रूप॥ ३३९॥

सोरठा।

वस्तु यथावतरूप, अपने रूपविषै सदा।
नाना भेद अनूप, गुन-परजैकरि लसतु है॥ ३४०॥

विस्तार कथन।

चौपई।

अब सुनि छहौं दरवका व्यौरा, विधिविसेख कहवतिकरि थोरा।
प्रथमहि जीवदरव कहियत है, यथाभेद आगम लहियत है॥३४१॥
जीव वस्तु सुनि दुय परकारा, सुद्ध असुद्ध चेतना धारा।
सुद्ध सिद्ध गतिविषै विराजै, संसारी असुद्ध पद छाजै॥ ३४२॥

जीव दोइ इन अच्छर माहीं, वस्तुरूप चेतन परछाहीं ।
नित्य अवाची वचि(?)जतावै, गुनपरजै लखि ग्याता पावै ३४३

अब सुनि गुन जो गुनना करिए, जीव नाम न्यारा अनुसरिए ।
जीवदरवका गुन चेतना, दरसन-ग्यानरूप केतना ॥ ३४४ ॥

सकल दरवसौं करै जुदाई, जीव विसेष प्रगट दिखराई ।
इत्यादिक गुन अनगुन गुनने, चेतनरूप आपमैं मुनने ॥३४५॥

अब सुनि जीव-दरव-परजाया, सुद्ध असुद्ध दुविध उपजाया ।
फुनि दुयविध परजैमैं रली, दरवरूप गुनरूपक कली ॥३४६॥

प्रथम दरवपरजाय सुहाया, संसारी नानाविध भाया ।
जगमैं जीव धरै तनु जेता, सो परजाय कहावै तेता ॥ ३४७॥

सुर-नर-नारक-तिरजग सारै, नानारूप अवस्था धारै ।
जीवदेसमैं परनति आछी, देह समान करमपद साछी ३४८ ॥

सो परजाय दरवका कहिए, जीव असुद्ध देसमिति लहिए ।
अब सुनि जीव सुद्ध परजाया, सिवगतिविषै निवास सुहाया ॥

किंचूना अंतिमकै तनुतैं, परजै दरवकरमकै हनुतैं ।
असंख्यात परदेस विषै है, एकरूप परिनाम दिखै है ॥३५०॥

जब विभाव-परजाय विनासा, सिद्धरूप परजै परकासा ।
आदि अनंत कहावति कहना, अविचल सासुत परजै रहना३५१

अब सुनि गुन-परजाय-विवस्था, जो जो लसै असुद्ध अवस्था ।
च्यारौं गतिमैं चेतन चेतै, मति-श्रुति-छयोपसम-बल जेतै॥३५२॥

च्यार ग्यान अरु तीन अग्याना, तीनौं दरसन गुन अभिधाना
इनकी जो जो परनति होई, गुनपरजाय समल है सोई॥३५३॥
अब सुन सिद्धविषै गुन गनना, स्यादवाद अध्यातम भनना।
निरावरनं दृग-ग्यान विराजै, सकल ग्येय प्रतिबिंबित छाजै ३५४
जो जो ग्यानरूप परिनमना, सो सो गुनपरजाय विरमना।
हानिविरधकै भेद बड़ाई, लसै अनूपम गुन ठकुराई॥३५५॥
सुद्ध सिद्धका दरव सुहाया, सुद्ध सिद्ध-गुन अनुभव भाया।
सुद्ध सिद्ध-परजाय बखानै, उपादेय अनुभौ हित ठानै ॥३५६॥

दोहा।

जीव-दरवकै सब कहे, गुन-परजै-गत भेद।
यथाग्यान ग्याता लखै, निज अनुभौरसवेद ॥ ३५७ ॥

सोरठा।

निज अनुभौरसवेद, ग्याताकै जीवन विमल।
मूढ़ करै बहु खेद, अनुभौरस प्रगटै नहीं ॥ ३५८ ॥

पुद्गलद्रव्य-गुन-परजाय कथन।

चौपई।

अब पुग्गलका विवरन करना, जातैं विषय विविध परिहरना।
पूरन-गलन सुभाव दिखावै, यातैं पुग्गल नाम कहावै॥३५९॥
अविभागी पुग्गल परमानू, दुनिकादिक मिलि त्रिविध बखानू।
वरनादिक मय वस्तु सुहाई, सोई पुग्गल नाम दिखाई॥३६०॥
वरन पाँच रस पाँच प्रगट है, आठ फास दुय गंध सुघट है।
मूरत अनु सहभावी सारे, नाना पुग्गल-गुन अवधारे॥३६१॥

पुग्गल-परजय दुयविध सुनिए, दरव अवरु गुनपरजै गुनिए।
सुद्धासुद्धरूप फुनि होई, दौनौंसौं मिलि चौविध होई ॥ ३६२॥
प्रथम सुद्ध अनु परजै नामी, अविभागी षटकोन विरामी ।
बीस गुननिमय मूरति जाकी, सुद्ध दरवपरजै विधि ताकी॥३६३
दुनिकादिक नानाविध खंधा, ते परजाय असुद्ध निबंधा ।
कादाचिक होहीं अस जाहीं, पुग्गलदरव-विभाग दिखाहीं ३६४
अब पुग्गल-गुन-परजै सुनौ, सुद्धरूप अनु अनुगत मुनौ ।
सुद्ध वरन-रस-गंध-फरस है,नानाविध परनति-रस-वस है ३६५
पाँच मुख्य गुन सदा रहे हैं, पनरह गुनकौं गौन कहैं हैं ।
वरन थकी वरनांतर होना, सो गुन-परजै सुद्ध सलोना ॥ ३६६॥
दुनिकादिकमैं गुन प्रगटाही, सात मुख्य तेरह गुन ताही ।
नानारूप खंध अनुगामी, गुनपरजै विभाव पर-नामी ॥३६७॥

दोहा ।

पुग्गल-दरव सरूप सव, वरनन किया सुभाय ।
सकल जगतमैं लसतु है, नानाकार दिखाय ॥ ३६८ ॥

सोरठा ।

नानाकार दिखाय, सदा सुभाव-विभावसौं ।
दर्व रु गुनपरजाय, सदा सुभाव-विभावसौं ॥ ३६९ ॥

कुंडलिया ।

दौनौं दरवविषै लसै, रूप सुभाव विभाव ।
च्यारौं दरवविषै सदा, केवल सुद्ध सुभाव ॥

केवल सुद्ध सुभाव, सुद्ध दरवनिमैं राजै।
परका नाहिं सहाव, आप गुन-परजै छाजै॥
जीव सुभावी होइ, बहुरि न विभावी होनौं।
जानहु पुग्गल-जीव-विषै लसना इन दोनौं॥ ३७०॥

धर्मद्रव्य कथन।

चौपई।

अव सुनि धरमदरव जो तीजा, सुद्धरूप गुन-परजयभीजा।
गति-सहकाररूपका वसना, लोकाकासवासमैं लसना॥३७१॥
वस्तुरूप जो अनुपम दिखिए, धरमदरव कहि ताकौ लिखिए।
गति-सहकार बसै गुन तामैं, सदा सुद्ध अविचलता तामैं॥३७२॥
धरम वस्तुमैं परजै नीका, गुन अरु दरवविषै रस लीका।
धरमदरव अनगन परदेसी, लोकाकास-वास अनुवेसी॥३७३॥
अजुत अखंड एक परकाला, सुद्धरूप परनति तिरकाला।
सोई सुद्ध दरव-परजाया, धरमदरवका अनुभौ भाया ३७४
गुन-परजाय जु सगरे वरते, गति-सहकाररूप अनुसरते।
षट् गुनहानिविराधि, अनुहारी, गुन-परजाय सुद्ध अवधारी ३७५

दोहा।

धरमदरवमैं गति नहीं, गतिकारक है और।
गति-सहकार धरमाविषै, गतिकारककी ठौर॥ ३७६॥

सोरठा।

गतिकारककी ठौर, धरमदरव नीका लसै।
वस्तुरूप निरदौर, सहज-सुभाव उदास है॥ ३७७॥

अधर्मद्रव्य कथन ।

चौपई ।

अधरमदरव लोकपरिमित है, एक अखंडरूप अरु नित है ।
थितिकारन जो वरतै सारै, सोई अधरमदरव निहारै ॥३७८॥
पुग्गल-जीव दुहूँ थिति करता, अधरम थिति-कारन उपधरता ।
सोई थितिकारन गुन सो है, छाया जिमि पंथकमन मोहै ३७९
परजै तामैं दुय परकारा, गुन अरु दरवरूप अवधारा ।
असंख्यात परदेस निवासा, एकरूप परिनति परकासा ३८०
सो परजाय दरवमैं देख्या, सुद्ध सदा अधरम अवरेख्या ।
तामैं थिति-कारन जो हत हैं, षट गुन-हानि-विरधि अवगत है ॥
समै समै परिनति परनमना, सो गुनपरजै अधरम गमना ।
ऐसा अधरमदरव वताया, ग्यानीजन सुनि सुनि सुख पाया ॥

दोहा ।

अधरमदरव भला कहा, क्रियारूपकरि हीन ।
सुद्ध लोक-परिमित लसै, सदा आपरसलीन ॥३८३॥

सोरठा ।

सदा आपरसलीन, सवै दरव जगमैं लसै ।
को किस हीन अधीन, वस्तुरूप निज परिनवै ॥३८४

आकाशद्रव्य कथन ।

चौपई ।

अव सुनि जो आकास विकासै, सकल अरथ जामैं परकासै ।
लोकालोक विसेप जनावै, देस अनंत अंत नहिं पावै॥३८५॥

जो अवकासकरूप वसतु है, सो आकास-दरव विलसतु है।
तामैं सवै ठौर अवकासा, सवै दरवकौं देइ निवासा ॥३८६॥

सोई गुन विसेषपद न्यारा, सदा सुद्ध अविचल अनिवारा।
अरु जो दरवरूप परिनामी, एकरूप परजै अभिरामी ३८७

सोई परजै नाम दरवका, परिनतिरूप लसै जु सरवका।
गुन अवकास सकलमैं वरतै, समै समै परिनातिकै भरतै ३८८

षट गुनि-हानिविरधि अनुसारी, सो गुन-परजै-परिनति न्यारी।
ऐसा दरव अकास कहावै, मूरति विना जिनेस वतावै॥३८९॥

कालद्रव्य कथन।

अव सुनि कालकला कछु जैसी, श्रीजिनराज वताई तैसी।
वरतै लोका-लोक विचारे, देस देसमैं अनू निरारे ॥ ३९० ॥

असंख्यात कालानू जे ते, निहचै कालदरव हैं ते ते।
तिन सवमैं वरतै वरतना, कालदरवका गुन सो गुना ॥३९१॥

कालानूकी परिनति जेती, निहचै परजै-परिनति तेती।
गुन वरतना पराश्रित जवही, समयादिक परजायी तवही३९२

परमानू उलटनिमैं जितना, वरतै काल समय सो तितना।
गुन-परजाय कहावति सोई, काल दरवकरि वरतन होई॥३९३॥

दोहा।

या परकार सकल कहे, छहौं दरवकै भेद।
ग्याताजनकै प्रगट है, जिनवानी-रस-वेद ॥ ३९४ ॥

सोरठा।

जिनवानी-रस-वेद, सबै ठौर नीका लसै।
मूढ़ वढ़ावै खेद, वस्तुभेद जानै नहीं ॥ ३९५ ॥

चौपई

छहौं दरवके गुन-परजाये, जिन जीवनकै हिये सुहाये ॥
तिनही जिय निजपर पहिचान्या, अपना मरम आपमैं जान्या
जो जिय दरव भेद नहीं जानै, सो कैसैं करि स्वपरि पिछानै।
जवलगि स्वपर भेद नहिं सूझै, तवलगि आपा कैसैं वूझै ॥३९७॥
यातैं गुन-परजैका लखना, दरव माहिं आदेय परखना।
सबमैं चेतन परखनवाला, पाँचौं जड़ वरतैं तिरकाला ॥ ३९८ ॥
विपय-कपाय धायकरि लागा, मोह-गहङ-ममता-रसपागा।
सुत-दारा-धन-तन-मन मेरा, सबै जगतमैं किया वसेरा ॥ ३९९ ॥
अपना रूप न रंचक जाना, परमैं दौर दौर लपटाना।
देखै सुनै अनुभये सारे, वारवार परभाव निवारै ॥ ४०० ॥
अव तौ याकौ चहिए चेता, 'को हूँ' 'को पर' जग यहु केता।
विपय-विरमकरि जानै आपा, भेदविग्यान सहज गुन मापा ४०१
वहुत वढ़ाव कहाँलौं कीजै, जानपना अनुभौ-रस पीजै।
जैसा कछु मुनिराज वताया, जानपना पंचासतिकाया ॥ ४०२ ॥
तैसा याकौं चहिए जाना, और भाँतिकरि जग भटकाना।
कुंदकुंदमुनि जग-उपकारी, मगट किया जनहिय-हित सारी ४०३
पंचासतिकाया हित सारा, कुंदकुंद मुनिराज विथारा।
जे इस हितका अनुभौ करई, ते अपना गुन सहजहिं धरई॥४०४॥

कुंडलिया ।

पंचासिकाया सकल, पूरन भया गरंथ ।
कुंदकुंद मुनिराजकृत, पंचमगतिका पंथ ॥
पंचमगतिका पंथ, प्रगट जामैं दिखराया ।
आपरूप पररूप, लखन सब मुनिजन भाया ॥
आप उपादै लसै, हेय पर-पद सब वंचा ।
सकल भेद जगमगै, अस्तिकाया जह पंचा ॥४०५॥

सोरठा ।

पंचमगतिका पंथ, सिवगामीकौं प्रगट है ।
जिनवानी-रस-मंथ, कालजोग चेतन लहै ॥ ४०६ ॥

चौपाई ।

अब सुनि ग्रंथ व्यवस्था कैसैं, पंचासतिकी रचना जैसैं ।
कुंदकुंद मुनिराज प्रवीना, स्व-पर-विवेक-सुधारस-भीना॥४०७॥
सुद्ध एक उपयोगनुचारी, यथाजात-पदवी जिन धारी ।
दरवसरूप वचन परकासै, स्व-पर भेदकी कथनी भासै ॥४०८॥
ताकै वचन विचार विचारे, द्वादसांगवानीमैं सारे ।
समय नाम इक है अधिकारा, तामैं जिनवानी-रस सारा॥४०९॥
ताकी गाथा रचना कीनी, प्राकृत निजसरूप रसभीनी ।
कुंदकुंद मुनि जन उपकारा, बड़ा किया आतमहित सारा ४१०
तिसमैं नाना अरथ विथारा, ग्यानीजन-मन परम पियारा ।
बहुत गहीर तीर नहिं पावै, ग्यानीजन-मन जहाँलगि धावै ॥
आगम अरु अध्यातम कथनी, जहाँ तहाँ जिनसासन-मथनी ।
आगम भेद कथनकौं कहना, अध्यातम निरभेद निवहना॥४१२॥

भेद अभेद दोऊ इक संगी, स्यादवाद-रचना मनचंगी ।
तातैं याकी रचना माहीं, भेद अभेद दोऊ दिखराहीं ॥४१३॥
तातैं ग्रंथ भया विसतारा, दरवित-भावित-अरथ-विथारा ।
भव्य-जीव सुनि सुनि हित उपजा, स्वपर-विवेक-बीज-पद निपजा।
प्रगट मोख मारग दिखराया, ग्यानीजन सुनि सुनि सुख पाया ।
जहाँ तहाँ पंचासतिकाया, कथन चलत बहुकाल चिताया॥४१५॥
तब इक अमृतचँद मुनिराजा, उपज्या जनु निज अमृत समाजा ।
यथाजात-पदवी निरवाही, सप्तम अष्टम गुन अवगाही ॥४१६॥
स्यादवादवादी अति नीका, ताकौं देखि आनमत फीका ।
तिनने कुंदकुंदमुनि-वानी, देखी स्व-पर-विवेक निसानी ४१७
बड़ा सकल सुख आपहि मान्या, द्वादसांगसा नीरस मान्या ।
तब तिन कुंदकुंदमुनि-वानी, जैसीकी तैसी परमानी ॥४१८॥
उपन्यासविधि टीका कीनी, सब अनुमान-सुधारसभीनी ।
सबद गहीर अरथकरि गहरी, कुंदकुंद-अनुभौरसलहरी । ४१९

दोहा ।

कुंदकुंद मुनिराजकै, वचन आपरसलीन ।
जैसेके तैसे कहे, अमृतचंद परवीन ॥ ४२० ॥

सोरठा ।

अमृतचंद परवीन, आपरूप पररूपमैं ।
आपरूपमैं लीन, पर परमैं सब परिहरा ॥ ४२१ ॥

इति समयव्याख्यायां नवपदार्थपुरस्सरमोक्षमार्गप्रपञ्चवर्णनो नाम द्वितीयः श्रुतस्कन्धः समाप्तः ।

भाषाकारका परिचय।

चौपई।

कुंदकुंदका अनुभौ सारा, दिया दिखाय प्रगट उजियारा।
तातैं यहु पंचासतिकाया, प्रगट भया आतम-सुख पाया ॥१॥

अब सुनि जैसैं भाषा-रचना, भई नवीन पुरातन खचना॥
नगर आगरा सब विधि अगरा, लसैं जहाँ नरनागर सगरा २

तामैं अग्रवाल कुल सोहै, संगही अभैराज मन मोहै।
बड़ा धनी परगट जग सारै, जहाँगीरकै राज विचारै ॥ ३ ॥

ताकै वनितागनमैं पतनी, 'मोहनदे' सबविधि जत-जतनी।
लछमीरूप लसै अवतारा, सब परिजनमैं किया उजारा ॥४॥

ताका पूत भया जगनामी, जगजीवन जिनमारग गामी।
जाफरखाँकै काज समारै, भया दिवान उजागर सारै ॥ ५ ॥

आतमनिधि जिन पाई आछी, सकल काजमैं वरतै साछी।
स्व-पर-विवेक अहोनिसि भावै, स्यादवादजिनमारग गावै ॥६॥

ता समीप इक पंडित ग्यानी, हीरानंद विवेकनिधानी।
जिनवानीका जाननवाला, जानपना जिन लख्या निराला ७

ताकरि ग्रंथ पुरातन पढ़िए, अध्यातम-चरचा नित गढ़िए।
जगजीवन जग जीवनि पालै, साधर्मी-जन-प्रीति निहालै ८

इक दिन सो साधर्मी जनमैं, वैठे हुते आगरे खनमैं।
चरचा चली ज टीका कीजै, पंचासतिकाया परतीजै ॥ ९ ॥

तहाँ भगौतीदास है ग्याता, धनमल और मुरारि विख्याता।
लागै कहन मनोरथ सरई, पंडित हेमराज जो करई ॥ १० ॥
आगै प्रवचन-भाषा कीनी, कवित विना नर-कहवति लीनी।
तैसैं ही जौ यहु भी कहई, तौ आतम सैली निरवहई ॥ ११ ॥
तब जगजीवनदास प्रवीना, बोल्या वचन स्व-पर-रसभीना।
कवितरूप जो रचना होई, तौ सुनि सुख पावै सब कोई ॥१२॥
पंडित हीरानन्द करैया, कवितबंधका खंध धरैया।
थोरे दिनमैं पूरन करि है, अमृतचंदका अरथ हु धरि है ॥१३॥
ऐसैं कहिकै मनमैं राखी, ग्रंथ सँपूरन है है भाखी।
केते दिनमैं तहतैं आये, साहजहानाबाद सुहाये ॥ १४ ॥
तहाँ मिल्या संगही हितकारी, मथुरादास मिलापी भारी।
रावनिआ परसिद्ध कहावै, सदै जीवकौं सुख उपजावै ॥ १५ ॥
तासौं मिलिकै चरचा करिए, स्व-पर-विवेक हियेमैं धरिए।
एक दिवस यहु बात चलाई, ग्रंथ करनकी थिति ठहराई १६
पंडित हीरानँदसौं बोलै, अपने जियकै मनरथ खोलै।
पंचासतिकायाकौं कहिए, टीका तातपरजसौं गहिए ॥ १७ ॥
दोहा आदिक भाषा कहना, थोरेमैं कछु बहुत निवहना।
बहुत बढ़ाव कछू नहिं करना, कुंदकुंदका अनुभौ धरना ॥१८॥
पंचमकालविषै बुधि थोरी, तापर विषय-मगनता ढोरी।
बारबार कहि गुरु समझावै, तौउ न तनक हियेमैं आवै ॥१९॥
तातैं कछु इक सूधा कहौ, पंचासतिकाया निरवहौ।
ऐसैं कहिकै हित उपजाया, पंडित जनकै हिये सुहाया ॥२०॥

तब हीरानँदकै जिय आई, कहत हितू ए हित अधिकाई ।
वड़ा काज यहु आतम केरा, जाकै कहत स्व-पर सुरझेरा ॥२१॥
इनकौ निमित आपना कामा, जिनवानी कहवतिमैं रामा ।
जिन परनिमित मिलै निजकाजा, किया नाहिं तिन् दुहु जग लाजा
जे निज-पर-कारनतैं सुरझे, ते जग माहिं रहत नहिं उरझे ।
तातैं वढ़ा काम है ऐसा, स्व-पर-निमिततैं चेतन चेता ॥ २३ ॥
चितवनकौं पंचासतिकाया, जामैं सब जगभाव समाया ।
ताका अनुभौ करवे लाइक, जो पै जोग जुरै इह भाइक॥२४॥
तातैं उत्तम निमित वना है, सुननेकौं ए दोइ जना है ।
वड़े विचारक सवही विधिकै, समझनवाले आगम निधिकै २५
जो जो दिनप्रति करिए कावी, सो सो इनपैं पढ़िए आवी ।
हीन अधिक जो कछु इक होई, तौ चरचामैं सुधर सोई॥२६॥
तातैं यहु संपूरन ग्रंथा, होइ सकैगा सिवका पंथा ।
तातैं याका करना भला, पढ़त सुनत मिथ्यादृग गला ॥२७॥
ऐसी जानि जथामति किया, जानपना अनुभौरस पिया ।
ग्रंथ पुरातन कहिवत नया, दोइ मासमैं पूरन भया ॥ २८ ॥

दोहा ।

संवत सतरहसो भला, गिरहोतरा कहाव ।
जेठमास-सित-सप्तमी, पूरन भया कहाव ॥ २९ ॥

सोरठा ।

पूरनभया कहाव, कहनेका उर कछु नहीं ।
कहतनि विषै लखाव, सोई लख पूरन लखै ॥ ३० ॥

सवैया इकतीसा।

ग्यान-दृग-विमल-अमल-कल लोकनितें,
लोक रु अलोक प्रतिबिंब अवगत हैं।
जैसेंकै मुकर परछाय प्रतिछाय करै,
मुकुर स्व-पर धर पर न वहत हैं (?)॥
ऐसो जिनराज माधि अंत जिनराजपद,
सब पद पूज पूज आतम महत हैं।
वीरनमें वीर जिन धीर महावीर लसें,
ताहीमें समार 'हीर' ग्रंथ विकसत है॥ ३१॥

सवैया तेईसा।

वीरजिनांतर मध्य भयौ, नृप विक्रम नाम महा सकवंधी।
एक हजार औ सातसै ऊपर, भूपर नाम चलावत संधी॥
औ गिरहोतर जेठमहीनेकी, उज्जल सातमिका प्रतिवंधी।
'हीर' गरंथ भया परिपूरन, पूरन होई सुनै जगधंधी॥ ३२॥

दोहा।

जगधंधी अंधे महा, फिरैं जगत धंधाल।
एक समै मुन्छिम समै, लहत लहैं सिवचाल॥ ३३॥

चौपई।

साहजहानाबाद नगरमैं, पूरन-परमानंद-डगरमैं।
पूरन भया गरंथ सुहाया, भविकलोक-लोकनि-मनभाया२४

सवैया इकतीसा ।

विमल विलोकनि विलोक लोक लोकनि सु,
निज निज हिय रस बसतैं समारा है ।
कोटनका कोट ओट सूर ससि तेज छवि,
नाना घर दरबार अटनि अटारा है ॥
अनुपम बाजार सार अतिही विथार धार,
मारतार कोई नाहिं राजनीति धारा है ।
प्रगट जहानाबाद साह साहजहाँ मति,
गति रुचि पचि पचि पचनि विचारा है ॥ ३५ ॥

दोहा ।

साहजहानाबादमैं, भया पुरान पुरान ।
सब कुरान राने जहाँ, साहजहाँ परधान ॥ ३६ ॥

सवैया इकतीसा ।

चहुँ ओर अरवार अरिनकी नारी जन,
तन मन कंपत रहत नित गेहमैं ।
महाबली दली दल दलमले भले भले,
गढ़ मढ़ ढाहि ढाहि कीने खिन खेहमैं ॥
चित हित वित लेइ लेई मिले जे जे जन,
ते तें दिन दिन सुख सुखिया सनेहमैं ।
'हीर' धीरवीरनिमैं वीर साहजहाँ जग,
लसै परिपूरन वदन नृपदेहमैं ॥ ३७ ॥

याही बादसाहि साहिजहाँ बादसाही माहिं,
ग्रन्थ निरवाह किया हिया अवधारिकै ।
पूरव अपूरव गरंथ पंथ देखि देखि,
लेखि लेखि अलख अखान (?) अनुसारिकै ॥

भविनकौं भवभ्रम भानिवेका भाव धरा,
सरा सुख म्रुख रूख दूषण निवारिकै ।
'हीर' परमारथ अरथकरि सारथ है,
भारथीका......सुनिए विचारिकै ॥ ३८ ॥

ज्यौं ज्यौं भविजन मन देइ लेइ रस रस-
वस होइ खोइ विमति विधानकौं ।
त्यौं त्यौं सुख वढ़नि घटनि-दुख-दूषनिकी
भूषनिकी भूषा भूपि सुख सुखवानकौं ॥

सुर-नर-फनपति-पतिनकै सोभासोभ,
लोभालोभ एक सुद्ध आतमनिदानकौं ।
करम-कलंक-पंक-अंक परिहारकरि,
'हीर' निजरूप भूप पावै निरवानकौं ॥ ३९ ॥

सबद अनादि तिन सकती अनादिहीकी,
अरथ अनादि सब सहज सुभावतैं ।
किये न कराये काहू करै न करावै कोऊ,
दोऊ नाना भेद पर कहन कहावतैं ॥

यातैं कहौ नूतन कहा न कहा कहै कवि,
श्रुति परवाह वहै चलन चलावतैं ।
'हीर' समरस-पान जानपना जान जान,
पूरन लखाव स्यादवादकै लखावतैं ॥ ४० ॥